सूत्र—तो प्रिये ! इसमें अनोखी कौनसी बात है ? यह तो संसार ही जानता है, कि वह निर्विकार निर्लेप नारायण सृष्टि के हर एक अणु में समाया हुआ है और उस विराट् रूपधारी अनन्त, शक्तिशाली, भगवान् के अनन्तरूप और अनन्त नाम हैं। उसे जिस नाम से चाहें भजें, वह हमारा काम है —

भाव ही है वेष उसका वह बसे सद्भक्ति में।
शक्ति उसकी देख लो संसार की हर शक्ति में॥
ईश ईशा कृष्ण और, करीम एकहि शक्ति है।
उसको पाते हैं उसी में जिसमें जिसकी भक्ति है।
हर तरह की पूज मूरति, आर्य दिखलाते हैं यह।
हर जगह "हर" हर तरह हैं हरको सिखलाते हैं यह॥
वो मंथर हैं जो धरते दोष हमपर बुतपरस्ती का।
वो "हर" हरमें है, हर हिन्दू सबक देता है भक्ती का॥

नटी—तब तो आप यह भी कहेंगे, कि मनुष्य की भी पूजा करनी चाहिये ?

सूत्र—अवश्य !

नटी—और नारायण के भाव से ?

सूत्र—अहा ! यदि यही भाव प्राप्त हो जाय, तो फिर कहना ही क्या है ! यदि दुनियाँ में द्वै का भाव उठ कर ऐक्य का भाव दृश्यमान होने लग जाय, तब तो, आत्मा और परमात्मा का भेद ही मिट जाय ? परन्तु ऐसा होना महान कठिन कार्य है। हर मनुष्य "हर" को हर रूप में देख ही नहीं सकता—

"हर" को देखे हर में जो, तो सबसे ऊँचा भाव है।
पार क्यों पहुँचेगा वो, द्विविधा में जिसकी नाव है !
ज्ञानकी आँखों पै जब अहंकार का परदा पड़ा !

मध्य नारायण वो नर के द्वेष का झगड़ा अडा !
द्वेष अरु अज्ञान का पर्दा हटा सकता है जो।
जगके हर परमाणु में ईश्वर को पा सकता है वो॥

नटी०-तो क्या वस्तुत मनुष्य भी इस योग्य हो सकता है, कि वह इसी नरदेह से नारायण को प्राप्त कर सके ?

सूत्र-प्राप्त तो क्या, वह इस आत्मा को ही परमात्मा बना सकता है ! यों तो एक न एक दिन सभी शक्तियों को उस विशालशक्ति में मिलना ही पड़ता है, परन्तु जो आत्मा, ज्ञान, विवेक, बुद्धिबल और प्रेम-भाव से संसार को भूल अहंकार को दूर कर सकता है, वह आत्मा सहज ही में परमात्मा से मिल तद्रूप हो जाता है।

नटी-परन्तु क्या,हम अबला स्त्रियाँ भी अपनी आत्मशक्ति को बढ़ा सकती हैं? जिनका आजकल संसार में कोई मान ही नहीं और जो सदा दासी बनी रहती हैं, क्या वे भी सम्मान पा सकती हैं ?

सूत्र-सन्मान तो अवश्य ही पा सकती हैं, बल्कि संसार में सबसे श्रेष्ठ कहला कर पूजी जा सकती हैं, पर वे अपनी दासी वृत्ति को नहीं हटा सकतीं।

नटी—यह क्यों ?

सूत्र-इसीलिये कि वही इनकी विशाल शक्ति है, पतिपद पूजा और पति-सेवा ही से इनको मुक्ति है । जो इन्हें सारे ब्रह्माण्ड पर विजय दिला सकती है ! पति-प्रेम-पति-व्रत यह इनकी अटल पति भक्ति ही है।

हरि हर ब्रह्मा झुके थे जाके अनसूया के पास।
यमको सावित्री ने जीता सत्य का देखो प्रकाश॥
इन्द्र ने छेड़ा अहिल्या को मिला उसको भी त्रास।

हो गया रावण वली का शाप के सीता से नाश॥
मौत को भी जीत सक्ती है सती पति-प्रेम से।
शक्ति की अवतार है पूजे जो पति-पद नेम से॥

नटी-अच्छा, तो फिर किसी सती चरित्र से ही दर्शकों को रिझाइये और भारत की गृह ललनाओं को सतीत्व का आदर्श दृश्य दिखाकर उन्हें पश्चिमीय सभ्यता की कुप्रथाओं से दूर हटाइये।

सूत्र-तो फिर जाओ! और शीघ्रही सती शिरोमणि सावित्री देवी के पवित्र चरित्र का अभिनय रचाने के लिये पात्रों को सजाओ, तव तक मैं भी प्रस्तुत होता हूँ।

नटी-जो आज्ञा।

(नटी का जाना)

सूत्र— गाना।

है जगमें धन्य सती नारी जो पति भक्ती पै अटल रहै।
हरि हर ब्रह्म इन्द्र यम हारे सती की सक्ती से।
सत्य की शक्ती वड़ी है सब से वेद पुराण कहै॥ हैज०
नारि नाव संसार धार में होवे लक्ष वहै।
"गुप्त"पार पहुँचे वह नार जो पति-पद-व्रत पतवार गहै॥हैज०

(गाते गाते जाना)

———

1857

अंक पहिला—दृश्य पहिला।

स्थान—ब्रह्मलोक।

(श्री ब्रह्मदेव सागर के मध्य मृणाल मंडप में विराजमान हैं, शारदा देवी शुद्ध सांगीत सागर का सुधा श्रोत बहा रही हैं, नारद भगवान् वीणा बजा रहे हैं, देवबालायें नृत्य कर रही हैं) गाना।

श्री नमो ब्रह्म वेद स्वरूप, सब शक्तिमान् जय जगद्भूप ॥
प्रत्यक्ष कीर्ति पृथ्वी अकाश, उड़गन अनन्त रवि शशि प्रकाश
चर अचर जीव जन्तू भुआल, नर दुखी सुखी दीनन भुपाल
फल फूल वृक्ष विरच्यो अपार, तो भी हो गुप्त जय जगतकार
सरिता तलाव वन बाग कूप, सृष्टी पसार अद्भुत अनूप॥श्री०॥

(नेपथ्य से दोहाई का होना)

ब्रह्मा—हैं! ये कैसी दोहाई? और यह दोहाई की ध्वनि कहाँ से आई?

नारद—जान पड़ता है कि मृत्युलोक में महाराज अश्वपति की अटल तपस्या को देख कर, देवताओं की टोली भयभीत होकर आपके शरण आ रही है।

(सब देवताओं के साथ इन्द्र का आना)

सब—श्री ब्रह्मदेव को प्रणाम है! भगवती शारदा और नारदमुनि को प्रणाम है।

ब्रह्मा, नारद, शारदा—प्रसन्न रहो!

इन्द्र—महाराज! अपनी प्रसन्नता के दिन तो अब, गए से प्रतीत होते हैं, नरलोक में महाराज अश्वपति अखण्ड जोग जगाते हैं और कदाचित् वह देवपुरी को जीत लेना चाहते हैं।

अश्वपति निकले हैं घरके सबसे नाता तोड़ कर।
वन में बैठे राज ताज औ साज सुख को छोड़ कर॥
कर रहे हैं घोर तप वो जगत् से मुँह मोड़ कर।
मिल रहे हैं ईश से वह भक्ति नाता जोड़ कर॥
रीझ जायँगे जो वह संकट हरण विश्वेश्वर।
है यही शंका के दे डालेंगे मनमाना वो वर॥

कुवेर-हाँ ! योगका अभ्यास है सुरधाम पाने के लिये।
देवगण फिर तो रहेंगे दु ख उठाने के लिये॥

यम—और मुझे भी भय है कि-

कर बैठे वार हम पर पाके मृत्युञ्जय के वर।
तब तो वह फहरायगा जयकी पताका विश्वपर !
आपके आये शरण हम अब हमें अपनाइये !
जिससे हो उपकार देवों का उपाय बताइये ?

ब्रह्मा-चिन्ता न करो वत्स ! धैर्य धरो ! तुम लोग महाराज अश्वपति की अद्भुत शक्ति, अतुल राज्य विस्तार और अखंड-धन-भण्डार से अनजान हो, अत वह तुम लोगों का ऐश्वर्य हड़प जाना चाहता हो इससे बेडर रहो !

है अगम अक्षौहिणी बलवान् सेना साथ में !
है अतुल-यश स्वर्ग-सुख सम राज्य उसके हाथ में॥
है पड़ी क्या चाह उसको स्वर्ग के सुख साज की।
है सुकीरति अचल जग में अश्वपति महराज की॥

यम-तो फिर वह मेरी शक्ति को ही पाने की इच्छा से तप कर रहा होगा ?

नारद-वह आपकी शक्ति को लेकर ही क्या करेगा ?

यम—क्यों, क्या आप मेरी शक्ति को व्यर्थ समझते हैं ?

नारद-हाँ ! आप सत्य कहते हैं !

यम—नारद जी! ऐसा न कहिये, मेरी विश्व विदित विशाल शक्ति को तुच्छ न समझिये—

रोक सक्ता ही नहीं कोई हमारे वार को।
नष्टकर डालूँ यदी चाहूँ तो सब संसार को!
सुर असुर नर नाग किन्नर सब मेरे आधीन हैं!
विश्व-विजयी जो हैं वह भी मेरे सन्मुख दीन हैं!
सर झुकाना पड़ता है सबको मेरे उस द्वार में!
अत में आते हैं सब बँधकर मेरे दरबार में!

नारद-अपनी मनमानी कहें शक्ती नहीं है आप में!
शक्ति ब्रह्माज्ञा में है वो, आप हैं किस दाप में!
आपको भी जीत ले, है शक्ति ईश्वर जाप में!
दे जला तुमको, ये है शक्ती सती के ताप में!

यम—यह आपका मिथ्या विचार है! यद्यपि यह बात सत्य है कि मैं ब्रह्मदेवकी आज्ञाके आधीन हूँ, परन्तु संसार से बलवान हूँ—

वस्तुत डरता हूँ मृत्युञ्जय के भक्ति ताप से।
किन्तु मैं डरता नहीं सतीसे सती के शाप से!
अनन्त सतियों को मेरे दर्बार में आना पड़ा।
विश्वको हर शक्तियों से है हमारा बल बड़ा!

नारद—यमराज! अभिमान न करो!
यम—मुनिराज! मिथ्या गुमान न करो!
नारद—तुम्हारा यह अहङ्कार टूट जायगा!
यम-जब समय आयेगा, तब देखा जायगा!
नारद—मैं भी तुम्हें दिखा दूँगा।
यम—और मैं? .....
ब्रह्मा—बस चुप रहो! आपस में न झगड़ो। सुनो, हम

और तुम तथा देवगण सब लोग व्यर्थही अपने को सर्व शक्ति शाली समझते हैं और दूसरों के सुख दुःख के दाता बनते हैं यह हम लोगों की भूल है ! वास्तव में भाग्य का विधाता मैं नहीं वरन प्राणी स्वयं ही अपने भाग्य का विधाता है। उसके कर्म ही से उसके भाग्य की सृष्टि होती है, हम तो केवल उसके कर्मों के अनुसार ही उसकी व्यवस्था करने वाले हैं! अतः यह सब सारा झगड़ा व्यर्थ है और जो तुम लोग अश्वपतिकी तपस्या से सशंकित हो, सो सुनो ! अश्वपति धन धाम के लिये नहीं वरन अपने वंश-वृद्धि के हेतु श्री सावित्री देवीकी उपासना करता है ! अत मैं सावित्री देवीको भेजकर उसका मनोर्थ सिद्ध करा देता हूँ और आप लोगों का भय मिटा देता हूँ।

(ब्रह्मा का ताली बजाना, सावित्री का प्रगट होना)

सावित्री-देव ! कहिये क्या आज्ञा है ?

ब्रह्मा-देवी ! तुम्हारा अनन्यभक्त अश्वपति, मृत्युलोक में तुम्हें प्रसन्न करने के लिये अखंड तपस्या कर रहा है। क्या तुम इस बात से अनभिज्ञ हो ?

सावित्री-भला भक्त याद करे ! और मैं उससे अनभिज्ञ रहूँ ? नहीं देव, ऐसा नहीं हो सकता ! जिस तरह भक्त मुझे याद करता है। उसी भाँति मैं भी प्रतिक्षण उसकी मंगल कामना की चिन्ता में मग्न रहती हूँ -

भक्त मेरी भक्ति में हैं मैं हूँ उसके भाव में।
पास उसके हूँ हृदय से दूर हूँ दिखलाव में।

ब्रह्मा-तो फिर उसे अपने दर्शन से संतुष्ट क्यों नहीं करती हो ?

सा०-इसलिये कि उसे संतुष्ट करने में मैं असमर्थ हूँ। वह संतान की कामना से मेरा ध्यान करता है और आपने उसके

भाल में पुत्र का अङ्क अङ्कित ही नहीं किया है। फिर भला मैं आपके अमिट अंक को मिटा सकती हूँ ? कहिये मैं उसकी इच्छा को कैसे पूरा कर सकती हूँ और उसे सन्तुष्ट कैसे कर सकती हूँ ?

ब्रह्मा-अपनी युक्ति और शक्ति से।

सावित्री—वह कैसे ?

ब्रह्मा-ऐसे कि मैंने उसके भाल में पुत्रका अङ्क नहीं लिखा है, अत वह नि संतान है, पर तुम्हारी शक्ति तो महान है ? यदि तुम चाहो तो अपने अंश से उसे कन्यारत्न तो प्रदान कर सकती हो उसे नि सतान होने का दुख हर सकती हो ?

मत पड़ो द्विविधा में दिल से दूर करदो भ्रान्ति को।
जाव दर्शन देके उसकी आत्मा को शान्ति दो॥
दो दिखा संसार को सुप्रभाव निज वरदान का।
भक्त को निज अंश से वरदान दो सतान का॥

सावित्री—आपकी आज्ञा शीश धरती हूँ और मृत्युलोक को प्रस्थान करती हूँ।

दान मैं देती हूँ कन्या का उसे निज अंश से।
परिपूर्ण होना चाहिये मम भक्तका घर वंश से॥

ब्रह्मा—तथास्तु ऐसाही होगा !

(सावित्री वायु वेग से उड़ जाती है, सब लोग ब्रह्मदेवको प्रणाम करते है)



अंक पहिला—दृश्य दूसरा ।

स्थान—लोभराम का मकान ।

(लोभराम का खुशी खुशी प्रवेश)

आया, आया, कई वार की हार के वाद अव भी जीतका दाँव आया ! वस अव तो अपना भाग्य भी चमक जायगा और कुवेर का भण्डार सहजही में हाथ आ जायगा । दुनियाँ की दौलत मेरे घर में पड़ी होगी और लक्ष्मी भी विष्णुका साथ छोड़कर मेरे दरवाजे पर हाथ वाँधे हुये सेवा में खडी होगी। वड़े २ धनवान्, सेठ साहूकार, राजाधिराज और राज-कुमार, वुड्ढे और जवान मेरी खुशामद किया करेंगे और

दुनियाँ का मजा लूँगा अव ठाठ वढाकर ।
दौलत से चन्दरोज में भर जायगा ये घर ॥

(झक्कीलाल का हाथ में भरा हुआ हुक्का लेकर आना)

झक्की०—और फिर तो अपना भी भाग्य चमक जायगा और लाला लोभरामजी के हाथ मे माल चढते ही, अपना भी काम वन जायगा ।

लोभ०—कौन झक्कीलाल ! अरे तू आया ?

झक्की०—जी हाँ श्रीमान् ! सेवक आपके लिये हुका भर लाया ।

लोभ०—मगर इतना समय कहाँ लगाया ?

झक्की०—चूल्हे में !

लोभ०—चूल्हे में ?

झक्की०-जी हाँ ? चूल्हे में आग सुलगाता रहा, जव आग

सुलग गई तो आपके लिये तम्बाकू भरने लगा और फिर चिलम को हुक्के के वायुयान पर चढ़ाकर धुआँ उड़ाता हुआ यहाँ आन पहुँचा। लीजिये २ जल्दी से हुक्के की निगाली को मुंह से लगाइये और अग्नि-यंत्र की भाँति धुआँ उड़ाइये!

लोभ०-ला, ला (हुक्का लेकर पीने लगते हैं) अच्छा, अब जल्दी से जा और पुरोहितजी को बुला ला!

झक्की०—पर मेरी तनख्वाह ?

लोभ०—मिल जायगी, अब वह भी मिल जायगी, अपनी गरीबी भी टल जायगी और तेरी तनख्वाह भी मिल जायगी!

झक्की०—मगर कब? क्या जब मैं माँगता माँगता स्वर्ग को सिधार जाऊँगा तब ?

लोभ०—नहीं, नहीं! अब वह दिन समीप ही है, अब मेरे साथ ही साथ तेरे दिल की कली भी खिल जायगी, घबड़ा नहीं! मुझे दौलत मिलते ही तेरी तनख्वाह भी मिल जायगी।

झक्की०—अरे यही सुनते २ तीन साल तो बीत गए अब और कब तक मिल जायगी की उम्मीद में रहूँ ?

लोभ०—बस थोड़े दिन की और देर है। सुन! आज से मेरी किस्मत का पासा पलट गया है।

झक्की०—वह कैसे ?

लोभ०-वह ऐसे, कि आज मेरी स्त्रीने कन्या रत्न जाया है बस अब दुःख की रात कट जायगी। जरा लड़की को बड़ी हो जाने दे, तब तो दौलत आपही आप दौड़ती हुई आयेगी। वह मुझे अमीर बनायेगी, तेरी तनख्वाह भी मिल जायगी।

झक्की०—मगर लड़की तो अपने साथ ही साथ अपने वर के संग में दहेज के मिस इस घर की सम्पत्ति को भी ले जायगी, फिर आपको दौलत कहाँ से मिल जायगी।

लोभ–अरे वो कोई और मूर्ख होंगे, जो दामाद को दहेज देते होंगे यहाँ तो रईस वा अमीर, शरीफ वा शरीर, मूर्ख वा विद्वान, बूढ़ा वा ज्वान जो मेरे पैरों पर रुपयोंकी थैली रखकर गिड़गिड़ायगा और जो मेरा घर दौलत से भर जायगा वो अपना घर भरने के लिये, मेरी लड़की को ले जायगा।

गाना–लड़की इसे न समझो ये है लक्ष्मी की अवतार।
जिसे हो दौलतमन्द बनाना लड़की दे करतार॥
लड़की होवे जिस नरके घर उसका हो दुःख छार।
कन्यादान करूँगा लेकर रुपया बीस हजार॥
वह क्या जाने इस रहस्य को जो है मूढ़ गँवार।
लोभराम का कन्या विक्रय है चोखा व्यापार॥
भरेगा घर रुपये से यार॥ भरेगा घर रुपये से यार॥

झक्की–ये बात है! तबतो खूब उड़ेंगे गोलगप्पे, ले लपक्के?
लोभ—अच्छा जा और पुरोहितजी को शीघ्रही बुलाला।
झक्की—बहुत अच्छा! श्रीमान् ने फरमाया और तावेदार ने हुक्म बजाया।

(जाना)

लोभ–पाया, पाया, पाया, बहुत समझाने बुझाने के बाद उसने मेरा मतलब पाया! और नहीं तो क्या, ये कोई सहज बात थोड़े ही है। यदि सभी लोगों को मेरी चालाकी आजाय, तो फिर संसारमें कोई लड़कीवाला गरीबही क्यों दिखलाय?

विना लिये धन जो कन्या दें वह हैं मूर्ख गँवार!
अपना तो कन्या देने से सुधरेगा संसार।
भरेगा घर रुपयों से यार, भरेगा घर रुपयों से यार॥

(झक्कीलाल का पुरोहित को लिये हुए प्रवेश)

झक्की०—ले लपक्के ! अबतो मजाही मजा है !

भाग हीन मत समझो इनको हैं किसमत के पक्के ।
बड़े २ धनवान आन खायें इस घर से धक्के ॥
देख कुण्डली छठी बरही के दिन कर दो नक्के ।
प्रोहित जी जेवनार में आके मारो हाथ हपक्के ॥

पुरोहित-आयुष्मान् हो कल्याण हो, धनवान् हो, कन्या खुश रहे आपका घर धन से भरपूर रहे !

झक्की०-(स्वत) अब क्या कहना है,अब तो ले लपक्के!

लोभ०-विराजिये, महाराज ! विराजिये ! और मेरी कन्या की कुण्डली विचारिये !

पुरोहित-(बैठते हैं) अच्छा तो अक्षत मँगवाइये और दक्षिणा चढ़ाइये ।

लोभ-न घबडाइये ! पहिले आप इसके ग्रह इत्यादि तो विचार जाइये फिर दक्षिणा और अक्षत भी मिल जायगा ।

पुरो०-मिल कब जायगा ? यह सकुन का कार्य है, इसमें भूसी दक्षिणा तो पहले अवश्य ही होना चाहिये ।

लोभ०-और यदि पीछे मिलेतो कार्य नहीं चल सकता है?

पुरोहित-नहीं इसके विना तो हम पुरोहितों का पत्रा भी नहीं खुल सकता है !

लोभ०-अरे झक्की ! मेरे यहाँ तो सौरी है, अत अनाज निकल ही नहीं सकता है? क्योंकि घरकी मालकिन तो सौरी में हैं,जा,यदि तेरे यहाँ चावल हो तो थोड़ासा ले आ, ताकि पंडित जी का सकुन तो हो जाय !

झक्की०—वाह मेरे यहाँ गल्ले की दुकान है जो जाऊँ

और अनाज उठा लाऊँ ? अजी ! पैसा निकालिये और बाजार से मँगवा लीजिये।

पुरो०-अरे तो इतना झंझट क्यों करते हो? उसके निमित्त पैसे हमें ही दे दो और कार्य्य समाप्त करो !

लोभ०-लीजिये (देता है)

पुरो०—(लेकर) हैं ! चार ही पैसे ?

झक्की०-(स्वत) और नहीं तो क्या, रुपये मिलेंगे ? अरे ये कहो कि यह भी आपकी चालाकी से मिल गये, वर्ना बस वही ! मिल जायगा सुन पाते, खाली हाथ चले जाते।

पुरो०—अच्छा कन्या के जन्म का समय बताइये ?

लोभ०—रात को बारह बजे !

पुरो०—सौरी का द्वार किधर है ?

लोभ०—दक्खिन !

पुरोहित—(पत्रा देखकर और कुछ गिनकर) वाह ! वाह! आपतो बड़ेही भाग्यवान हैं ! खुश हो जाइये ! खुश हो जाइये ! कन्या तो साक्षात लक्ष्मी का अवतार है, इसके सब ग्रह शुभस्थान में पडे हैं, बस अब आपका संपूर्ण कार्य सुधर जायगा और घर दौलत से भर जायगा !

लोभ०हाँ ! यह बात है ?

झक्की०—तब तो ले लपक्के !

लोभ—इसकी राशिका नाम ?

पुरो०-वह सब कुण्डली बनाकर लायेंगे, तब इकट्ठे ही बतायेंगे ! बोलिये नहीं, इस समय आपके भाग्यका इस तरह चमकना देखकर मैं मारे खुशी के संसार को भूल गया हूँ। बस अब लाइये, जल्दी दान दक्षिणा लाइये, चाँदी बरसाइये और खूब खुशी मनाइये !

झक्की—तब तो ले लपक्के।

लोभ-हाँ! मैं भी खुशी में पागल होगया हूँ,आप इस वक्त जाइये,मैं घर पर सब कुछ भेज दूँगा। ह ह-ह-ह-(हँसता है)

पुरोहित—(स्वत) यह बात है! अच्छा,तो मेरा भी नाम तब, जब अभी ही दक्षिणा लिया! (प्रगट) अरे रे रे रे रे, गजब हुआ बडा गजब हुआ! अरे सेठजी! एक बात तो मैं भूल ही गया था! हाय २ बड़ा गजब हो गया!

लोभ-महाराज! क्या होगया? कौनसा गजब हो गया?

पुरोहित—अरे! अच्छा हुआ जो आपने दक्षिणा देकर विदा नहीं किया; नहीं तो बड़ा गजब होजाता! सम्पूर्ण कार्य ही बिगड़ कर मिट्टी में मिल जाता।

लोभ—वह क्या! वह,क्या?

पुरोहित—सुनिये! कन्या श्रीकृष्ण भगवानके जन्म समय में हुई है,अत इसके सब लक्षण राज-रानियों के हैं,मगर इसे पूतना की बीमारी का खटका है! अत इसका अभी ही प्रबन्ध होना चाहिये,नहीं तो आज रात को बारह बजते २ ये .. ....

झक्की—मर जायगी, क्यों ठीक है न पण्डितजी?

पुरोहित—इसकी कुशल के लिए शीघ्र ही ग्रह-शान्ति का प्रबन्ध होना चाहिये।

लोभ—अच्छा! तो फिर जल्दी कीजिये, बतलाइये उसमें कितना खर्च होगा?

पुरोहित यों तो बहुत रुपये की ज़रूरत है, पर आज एक और आदमी की ग्रह शान्ति करनी है, अत सब सामान घर पर है, यदि आप पचीस रुपया खर्चें, तो उसी में आपका भी कार्य्य कर दूँगा और नही तो सौ से कम न लगेगा।

लोभ—इतना तो नहीं, हाँ दस रुपया कहिये तो दें।

पु०-(स्वत) मिलता धन छोड़ना न चाहिये (प्रगट) अच्छा लाइये, आप पुराने यजमान हैं, नहीं तो सौ से कम न लेता।

लोभ—तो फिर लीजिये। (देता है)

झक्की—(स्वत) ले लपक्के !:—

देखो यारो सेठों का यों समय पड़े झुक जायँ।
काम निकलता देख सदा उलटे आँख दिखायँ॥
ब्राह्मण, ओझा, वैद्य सभी यों सूमन से लेयँ।
अम्बा, नीबू, बनियाँ जब गर चाँपे, रस देयँ॥

पुरोहित—(रुपया लेकर) कल्याण हो !

लोभ—महाराज ! अब ठीक हो जायगा न ?

पुरोहित-आप जरा न घबराइये ! अब सब कुशल होगा।

गाना—सब कुशल करेगा तेरा जगत पिता।

झक्कड़—धर्म कर्म सब है पैसे का पैसे की है माया।
पुरो०-दान दिये ते पैसा जग में शुद्ध होत है काया॥ सब०—
लोभ—धाम और धन कन्या से सब हो जावेगा भाई।
झक्क०-(स्वत) नाश तुम्हारा कर डालेगी कन्या की कमाई॥ सब०-

(गाते २ सबका जाना)





अश्वपति—मां ! ये कैसा अधूरा वरदान ?
पुत्र की जगह कन्या का दान ?

अंक पहिला—दृश्य तीसरा।



स्थान—तपोवन।

(महाराज अश्वपति धूनी के सामने बैठे हुए सावित्री देवी के ध्यान में मग्न हैं)

गाना।

नमो देवि जय जय अहो ब्रह्म-वानी।
नमो विश्व जननी सुवरदा भवानी॥
सदा जगत हित चिन्तना करती हो माँ॥
जननि दु.ख हरनी हो आनन्द खानी॥
जो जन आश रख पास आते तुम्हारे।
तुम्हीं आश पूरण करो। माँ हमारे॥

(अग्नि की शिखा से सावित्री देवी का प्रगट होना)

सावित्री-वरंब्रूहि, पुत्र ! मैं प्रसन्न हूँ, वर माँग।
तेरे जी में मेरी भक्ति जो सतप्न से समाई है॥
उसी भक्ती की शक्ती जगमें मुझको खींच लाई है॥
मैं मृत्यु लोक में आई हूँ सुधि तेरीहि लेने को।
बता क्या माँगता है तू वह हूँ प्रस्तुत देने को॥

अश्व—(हाथ जोड़कर) अहा ! माँ! धन्य हो!!
भक्त हूँ याचक तुम्हारा और तुम वर देह हो।
जगत जननी का न क्योंकर भक्त जनपर नेह हो॥
हो इच्छा पूर्ण मेरी आज माता से मनौती में।
कि कुलका दीप इक सन्तान मिल जाये बुढ़ौती में॥

सावित्री—तथास्तु, पुत्र अश्वपति ! यद्यपि विरञ्चि ने तुम्हारे भाग्य में सन्तान का अङ्क अङ्कित नहीं किया है,तथापि मैं तुम्हारी भक्ति से अत्यन्त प्रसन्न हूँ और तुमसे वर माँगने को कह चुकी हूँ, इसलिये मैं तुम्हें अपने अंश से एक कन्या रत्न प्रदान करती हूँ और उसीसे तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी।

वह अटल कर देगी कन्या जग में तेरे नाम को।
होगई पूरी तपस्या जा तू अब निज धाम को॥
अ०-माँ ! ये कैसी वरदान ? पुत्रकी जगह कन्या का दान!
किस तरह एक बूँद जल देगा मिटा मम प्यास को ?
यों मिटा दीजे न माता मुद्दतों की आश को।

सावित्री-पुत्र, निराश न हो ! मेरे वचनका विश्वास करो-
स्वाती का जल एक बूँद पपिहा की प्यास बुझाता है।
उस एक बूँद जल से सागर का सीप तृप्त हो जाता है॥
एक ही चन्द्रमा अनन्त उड़गन में जो शोभा पाता है।
यह ॐ एक अक्षर अनन्त जगका ज्यो बोध कराता है॥
अनन्त सागर से बढ़कर है सीप को जैसे स्वाति सुजल।
उसी तरह एक कन्या से तव सुयश रहेगा सदा अटल॥
अश्व-तो मैं उस कन्याको पुत्रके समान ही ग्रहण करूँगा
सावित्री-हाँ ! और उसे मेरे समान ही जानना।

उस कन्या को जानना तुम मेरा अवतार।
सावित्री ही करेगी, दुख से बेड़ा पार॥
अटल करेगी जगतमें तेरी, कीरति औ सम्मान।
अन्त दिलावेगी तुम्हें, वह अनन्त सन्तान॥

(सावित्री का अन्तरहित होना और अश्वपति का हाथ जोडे खडे रहना)

अङ्क पहिला—दृश्य चौथा।



स्थान—मंदिर का मार्ग।

(सावित्री अपने सखि समूह के साथ गौरी की पूजा के लिये आती हैं।)

गाना।

चलो सजीली सुमुखि रसीली रुद्राणी पूजन चलिये।
चोवा चंदन कुम कुम केशर अच्छत सुमन शीश धरिये॥
गुन गाय गुण श्री गौरी को भाव सहित वन्दन करिये।
लै दुर्गा प्रसाद सावित्री मंगल मोद हिये भरिये॥
सुमुखि—जगत जननी आदि शक्ती पूजिये सनमान से।
होगा मंगल मंगला गौरी के शुभ वरदान से॥
सुलोचना—मनमें भावे फल वो पावे गौरिजी गुण-गान से।
प्राप्त होगा वर स्वसुन्दर गौरि के वरदान से॥

सावित्री—अरी हटो भी सही तुम सभों को तो प्रति समय हँसी टिठोली के सिवा और कुछ सूझता ही नहीं है—

जब देखी हम ढूँढ २ के नये २ स्वाँग रचाती हो।
ढीठ होगई हो तुम सब इतनी नहीं डराती हो॥
तरुणी हुई तरुण छवि छाये फिर भी नहीं लजाती हो।
पूजा वन्दन के वेला भी यूँ उत्पात मचाती हो॥

सुमुखि—वाह, जब कुछ पार न बसाई, तो मुझी को डाट सुनाई। भला बताओ तो बहन! गौरी मातासे सुन्दर स्वरूपवान वर का वरदान माँगने में क्या बुराई है?

सुलो०—सच तो है, सखि! इसमें चिढने की कौनसी बात

है ? चलो २ भगवती की पूजा के लिये जल्द चलो, और उन की पूजा कर उनसे सपने अनुरूप वर प्राप्त करने के लिये सप्रेम प्रार्थना करो।

सुमु०—हाँ! और जैसा मैं कहती हूँ वैसा वर माँगना, ध्यान रहे वहाँ न लजाना!

सुलो०—तुम मेरी सखी के लिये कैसा वर चाहती हो?

सुमु०कैसा? सुनो!

विष्णुसा सुन्दर मधुर भाषी व वीर महान हो।
हो मदन ऐसा मनोहर रसिक और सुजान हो॥
गोल सुघर कपोल हो औ भौंह कुसुम कमान हो।
नैन मृग सावक से सुन्दर सैन तीखे वान हो॥
सर्व गुण सम्पन्न हो सौन्दर्य्य की जो खान हो।
इन सदृश्यहि होय जो वह इनका प्रीतम प्रान हो॥

सावि०—चुप भी रहोगी, कि वकती ही जावोगी?
किस लिये यों छेड़खानी करके शर्माती हो तुम।
वे समय अनरीत की क्यों गीत को गाती हो तुम॥

१ सखी—क्या ये अनरीत की गीत है?

२ सखी–ठीक है! अभी तो आप भोलीभाली लाड़िली हैं भला अभी आपको इन प्रेम-वार्ताओं की कौन ज़रूरत है।

सुमु०—कहो सखी, ठीक है न?

सुलो०—वोलो, अव चुप क्यों?

सावि०—मुझे न छेड़ो।

सुलो०—अजी मान भी जाव, मुँह से तो वोलो।

सुमु०—लो भाई, इस नवीन मान-लीला को भी देखो। इसके लिये सुन्दर वर की प्रार्थना करने में भी बुराई है!

सावि०—बस २ अब अधिक न बनाओ।
सुलो०—तो दिल की न छिपाओ!

गाना।

सखियाँ—सखी आओ नहीं शर्माओ।
सुलो०—बात मन की न मोसो छिपाओ॥
सावि०—हटो छेड़ो न मोहें सताओ।
जाओ नाहक न रार मचाओ॥
सुलो०—सखि सब दिल की बात।
नैनन सो जानि जात॥
सावि०—नइ २ नित करके घात।
काहे मम जिय जरात॥
सुलो०—कासो लागे नैन आली।
भायो कौन भाग्य शाली॥
सावि०—चलो छेड़ो न मोहें बनाओ।
हटो जाओ॥ सखी॥ (सबका गाते२ जाना)

अङ्क पहिला—दृश्य पाँचवाँ ।



स्थान—गजपतिसिंह का दर्बार ।

(गजपतिसिंह मय अपने सेनापति मन्त्री और दर्बारियों के दर्बार में विराजमान हैं । नृतकियें नाच गा रही हैं)

गाना—आओ जी आओ सवको रिझाओ ।
नाचो गाओ वधाइयाँ, छुम छुम छनननननन ॥ आओ०
वाजे जगत में डंका, शत्रू उर व्यापै शंका ।
हम सब आनंद मनाइयाँ, छुम छुम छनननननन ॥आओ०

जबलो रवि शशि का रहै, नभ महँ दिव्य प्रकाश ।
तव लों इस दरबार में, हो आनन्द उल्लास ॥
राजा के शीश पै ताज राजै, सारे सुखों का साज साजै ।
वाजै नौवत सहनाइयाँ छुम छुम छननननन ॥ आओ०

गज—वीरसिंह ! मुझे अपनी सेना और तुम जैसे वहादुर सेनापति पर वहुत ही अभिमान है, तुमने जिस वहादुरी से मेरे राज विस्तार का प्रचार किया है, उसके लिये तुम्हें बधाई देता हूँ और विजयगढ़ की विशाल रियासत, जिस पर तुमने हमारी विजय पताका फहराई है, तुम्हें उसी सूबे का सूबेदार बनाता हूँ —

मुझे है ज्ञात जैसी वीरता तुमने दिखाई है ।
तुम्हें उस वीरताई के लिये कोटिन वधाई हैं ॥

वीर—ये श्रीमान् की बड़ाई है, जो आप मुझको मान देते हैं ।

गज—नहीं, ये तुम्हारी राज्य-भक्तिका प्रमाण है, जो आप लोग अपने कर्तव्य और मेरी आज्ञा पर मेरे राज्य विस्तार के लिये युद्धक्षेत्र में अपने आप को वलिदान देते हैं ।

वीर—नहीं, यह तो हम लोगों का धर्म ही है, जिसे हम अंजाम देते हैं——

हमारा धर्म है यह ही जिसे अंजाम देते हैं।
इसीके वास्ते हम आप से तनख्वाह लेते हैं॥
आँच हम आने न देंगे आपके समराज को।
युद्धमें मरकर भी लेंगे स्वर्गके सुख साजको॥

राज—धन्य है, धन्य है, वीरसिंह! तुम्हारी बहादुरी को धन्य है। अच्छा प्रधान जी! अब आप राज्य का समाचार सुनाइये और राज्यकार्य कैसे चल रहा है, उसे बताइये?

दशा शासन की है कैसी प्रजा की क्या अवस्था है?
बतायें राज के विस्तार की कैसी अवस्था है?

प्रधान-श्रीमान् के राज्य शासन से इन्द्रासन भी-सुख पाता है, जिस तरफ दृष्टि जाती है, आनन्द अपनी छटा दिखलाता है, हर तरफ प्रजा आनन्द ही मनाती है।

हो रही विख्यात जग में आपकी शक्ती महान।
कष्ट का दिखता नहीं है कहीं भी नामो निशान॥
सब तरफ है सल्तनत में आपके अमनो आमान।
सुक्खका रैयतके प्रस्तुत है सभी साजो समान
आपके समराज का चहुँओर ही विस्तार है।
बस, एक सालव राज को कर देने से इन्कार है॥

राज—कौन सालव राज! वही द्युमत सेन मेरा पुराना शत्रु! वह क्या कहता है? क्या वो मेरी शक्ति से भय नहीं करता है? क्या वो मेरी फौज-आँधी के सामने ठहर सकता है? क्या मेरे बहादुर सिपाहियों से लड़ सकता है? नहीं २ यदि उसमें इतनी ही सक्ति होती तो आज वह भी मेरे ही भाँति सम्राट बननेकी चेष्टा करता, मुँह छुपाकर बैठा न रहता।

मन्त्रणा देते ही देते ताज सर पर धर लिया।
ज्यूँ का त्यूँ वो है पर मैंने राज जगपर कर लिया॥
था प्रथम राजा हमारा अब वो मुझसे दीन है।
वह अलग कब तक रहेगा, जग मेरे आधीन है॥

प्रधान—महाराज ! सत्य कह रहे हैं ! वह भी यही सोच कर शान्त रहता ? वह तो श्रीमान् के आधीन होने को भी तैयार है, मगर वह अपने पुत्र सत्यवान से लाचार है ! राज कुमार सत्यवान बहुत ही उदण्ड है क्योंकि उसे अपने बल पर महान घमण्ड है—

लिख करके पत्र मैंने उस दिन जो था पठाया।
उत्तर में दूत अपना सा मुँह लिये युँ आया॥
कैसे कहूँ वो बातें उसने जो कुछ सुनाया।
वेडर कहा रिपू ने उसके जो मनमें आया॥
तलवार खींच करके सत्यवान ने कहा ये।
बस ! सिर नहीं झुकेगा मन्त्री के सामने ये॥
राज—ओह ! उसे इतना अभिमान है ?
सब—दर्बारी अपमान है ! अपमान है !!

वीर-हाँ इस राज्यका घोर अपमान है ! ओह ! क्या वो हमारे वीर सर्दारों से भी ज्यादा बलवान है ! जो उसे अपने बल पर इतना अभिमान है ?

१ दर०—हाँ ! वह ऐसा ही बलवान है।
आये जो शेर सामने उसको पछाड़ दे।
हाथी का दांत हाथ से अपने उखाड ले॥
२ दर०—बलवान नहीं कोई उससा जहाँन में।
शक्ती नहीं है उससे ज्यादा तुफान में॥
प्रधान—अच्छा है, उसे उसकी इच्छा पै छोड़िये।

उस वीरसे अब नेह का नाताहि जोड़िये॥

राज-नहीं, मुझसे ऐसा कायरपन कार्य्य न होगा! मुझे वहाँ तक शान्ति न मिलेगी, जहाँ तक सत्यवान का गुमान भंग न होगा!

प्रधान—नहीं श्रीमान्! ऐसी भूल न कीजियेगा, नहीं तो पछताना पड़ेगा! यदि आप उसे छेड़ेंगे तो व्यर्थ ही सहस्त्रों वीरों का खून बहाना पड़ेगा।

राज-तो क्या, मैं उसके डरसे डर कर चुपचाप बैठ रहूँ? क्या उसकी की हुई बेइज्जती को चुप चाप सहलूँ? नहीं, यह बहादुर राजपति से नहीं हो सकता। यदि आप लोग डरते हैं तो डरें, जो कायर हैं वह मर्द न बनें, बल्के चूड़ियाँ पहिन कर महलों में जा छिपें। मगर यह राजपति तो ललकार के सामने से नहीं हट सकता! सिंह सामने की ललकार सुनकर पीछे नहीं पलट सकता—

सेना फिर जाये मरे फिरें वीर सरदार!
फिर जाये किस्मत भले फिर जाये संसार!
पीछे मैं फिरता नहीं सुनकर के ललकार!
डर नहिं तब तक साथ है जब तक ये तलवार!
भरोसा था मुझे तुम सब का अब तक राज भक्ती पर।
मगर अब है भरोसा मुझको केवल अपनी शक्ती पर॥

वीर-नहीं, महाराज! ऐसा नहीं है, आपका सबके प्रति एक सा विचार कर लेना मिथ्या विचार है। चाहे सारा संसार आपका साथ छोड़ दे, पर यह आपका सच्चा तावेदार आपके इशारे पर अपने जीवन का बलिदान करने को तैयार है—

वीर जो हैं शत्रुकी परवाह वह करते नहीं।

शूर जो हैं युद्ध से पीछे कदम धरते नहीं॥
डर से हम परिचित नहीं हैं बुजदिली क्या चीज है ?
काल भी यदि सामने आये तो हम डरते नही॥
युद्ध में लड़ कर मरें यह क्षत्रियों का कर्म है।
स्वामि हित् बलिदान हो जाना हमारा धर्म है॥

राज-शाबास, मेरे बहादुर सूरदास ! शाबास ! मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी। क्यों न हो, 'वीरो के मुँह से ऐसी ही बातें निकलती हैं -

लाख वन पशुओं मे जैसे सिंह छिप सकता नहीं।
चन्द्रमा लाखो सितारों में हो छिप सकता नहीं॥
लाख वैरी हूँ से घिर कर वीर छिप सकता नहीं।
रक्त छत्रिय का छिपाने से भी छिप सकता नहीं॥
वीरवर ललकार सुनकर सामने आजायगा।
छिपते हैं कायर बहादुर शान पर मर जायगा॥

प्रधान—महाराज ! मुझे इस समय एक ऐसी बात याद आई है-जिसने पूरी विजय की आशा दिलाई है !

राज—वह कौनसी बात ? शीघ्र कहो।

प्रधान-मैंने सुना है कि इस वक्त सत्यवान मामा के यहां मेहमान है, वह अपने ननिहाल में गया है, इसलिये आपके मार्ग का टोकर आपही आप हट गया है ! बस, यह मौका बहुत ही उत्तम है। अत अब युद्ध की तैयारी कर शत्रु पर चढाई कीजिये।

राज-ठीक है, सेनापति ! तुम सेना को तैयार होने की आज्ञा सुना दो। स्वयं रण-चंडी की उपासना के लिये तैयार हो। प्रधान जी ! युद्ध के सामानों का प्रबन्ध करो-

(तलवार निकालकर)

जहान जाये तो जाये मगर जवान रहे।
ये जान जाये मगर वीरता का शान रहे॥
अपने पित्रों की कीरती का सदा ध्यान रहे।
करो वो कर्म ले जिससे जगत में मान रहे॥
तेग पिचकारि हाथ साथ वीर की टोली।
समर में शत्रुओं के रक्त से खेलो होली॥

(गजपतिसिंह के साथ तलवार खैंचकर सबका प्रस्थान करना)



अंक पहिला—दृश्य छठवाँ।



स्थान—राजभवन।

(महाराज अश्वपति का राज्य पुरोहित के साथ प्रवेश)

अश्व—कहिये ! क्या कोई सुन्दर वर मिला ?

पुरोहित—नरनाथ ! सबकुछ मिला, पर न मिला तो सारे संसार में केवल सावित्री के अनुरूप कोई स्वरूपवान-वरही न मिला ! हाय ! संसार का चक्कर लगाया पर कन्या के अनुसार कोई भी वर न पाया ! आखिर हताश होकर लोट आया।

कोई सावित्री सा सुन्दर मुझे जँचा ही नहीं !
कोई विरञ्चि ने ऐसा रतन रचा ही नहीं !

अश्व—पुरोहित जी ! ये आप क्या कह रहे हैं ? संसार किसी वस्तु से परे नहीं है—

मिला तुमको न कोई रत्न क्या संसार सागर मे।
न था पीने को क्या एक बूंद पानी खार सागर मे ?

पुरोहित-करे सीपों की तृप्ती है न शक्ती खार सागर मे !
वृथा है स्वाति जल विन रत्न का भंडार सागर में !

अश्व-हा ! विधाता ! क्या तूने सचमुच ही सावित्री के लिये वर की व्यवस्था नहीं की है ? क्या सत्य ही मेरी सुकुमारी को कोई सुयोग्य स्वामी न मिलेगा ? नही २, ऐसा कभी भी नहीं हो सकता हैं ! विधि का विधान इतना संकुचित नहीं हो सकता है ! जव तूने विष्णु के लिये लक्ष्मी, सुरेन्द्र के लिये सचि, मदन के लिये रति और शिव के लिये सती, का सर्व श्रेष्ठ जोडा सचय कर दिया है तो मेरी सावित्री के लिये भी अवश्य ही किसी न किसी सर्व गुण सम्पन्न वर की व्यवस्था करीही होगी। केवल मेरी खोज की कमी हो सकती है। परन्तु मैने भी तो उसके खोज में कोई वात वाकी नहीं रक्खी है ? फिर वह मुझे क्यों न मिला, तो क्या मेरी सावित्री सच ही मन्द भागिनी है ? क्या मुझे यह कलंक का टीका अपने मस्तक पर लेना ही पडेगा ? क्या विवाह के योग्य कन्या घर में वैठी रहे और मेरी जान धर्म संकट मे पड़ी ही रहे ? पुरोहित जी महाराज !

पुरोहित—आज्ञा महाराजाधिराज !

अश्व—आज्ञा नहीं प्रार्थना है, कि मुझे इस धर्म-संकट से वचाइये ! जाइये फिर जाइये और जैसे भी हो सके, मेरी सावित्री का सम्वन्ध किसी सुयोग्य-वर से ठहराइये —

पड़ी है धर्म संकट से हमारी जान सांसत में !
दया कर दीजिये मुझको सहारा आप आफत मे ?

पुरोहित-महाराज ! चिन्ता न कीजिये, धैर्य धरिये ! जगत

कर्ता जगदीश्वर की अतुल धर्म रक्षा का भरोसा करिये! वह अधर्म का करि, धर्म मंडन, धर्म का खंडन न होने देगा! वह धर्म के लिये अवतार धारन करने वाला धर्म संकट में आपको भी अवश्य ही सहारा देगा।

विनती कीजे ईश की त्यागि हृदय का शूल।
वर विरंचि विरच्यो अवसि सावित्री अनुकूल॥
अवश मिलेगा रत्न वह, ढूँढ़न ते एक रोज।
सावित्री वर की करो, दत्त चित्त सों खोज॥

(नेपथ्य से गाने की आवाज आती है)

चलो सुकुमारी दुलारी राजमन्दिर में मनहारी।
पूरण मन की करेगी इच्छा सारी शैल कुमारी॥चलो०-

द्वारपाल-(आकर) श्री नरेन्द्र की जय होय! राजकुमारी श्रीसावित्री देवी जगत जननी के मन्दिर से पूजन कर प्रसादी लिये हुए श्रीमान् को प्रणाम करने इधर ही आ रही हैं।

(सावित्री सखियों के साथ आती है और सब महाराज वो पुरोहित जी को प्रणाम करती हैं)

सावित्री—पिता जी! प्रणाम करती हूँ! पुरोहित जी! प्रणाम करती हूँ।

अश्व०-पुरोहित-पुत्री चिरंजीवी हो!

अश्व०-बेटी सावित्री! क्या आज तुम्हारा यज्ञ समाप्त हो गया? क्या तुमने महर्षियों का आशीर्वाद प्राप्त कर लिया?

सावित्री-हाँ पिताजी! आपकी कृपा और आशीर्वाद से सब कार्य निर्विघ्न समाप्त हो गया, परन्तु पिता जी. .

अश्व०-क्या कहती हो बेटी?

सावित्री–यही कि आज आप चिन्तित क्यों हो रहे हैं–
श्री मुख पर है उदासी किस लिए छाई हुई ?
किस लिये श्रीमान् की है आँख भरि आई हुई ?
स्वाँस है रुक रुक के चलती, दिल है अकुलाया हुआ ?
कौनसी चिन्ता है क्यों श्रीमुख है मुर्झाया हुआ ?

अश्व०–नहीं बेटी ! ऐसा तो नहीं है। वृद्ध अवस्था के कारण स्वाँस की गति धीमी पड़ गई है और यह जीर्ण शरीर सिथिल होने के कारण बीमार सी जान पड़ती है। तुम इसकी चिन्ता न करो, आनन्द ही आनन्द है।

सावित्री-नहीं पिताजी ! आप मुझसे छिपाते हैं पहले तो आपकी ऐसी अवस्था नहीं थी? मैं देखती हूँ कि आजकल चाहे जिस कारण से हो, आप चिन्तित अवश्य ही रहते हैं और मैंने कई बार ध्यान देकर देखा है, कि जब मैं आपके सामने आती हूँ, तब आपकी चिन्ता और भी बढ़ जाती है। सच बतलाइये पिता जी ! इस चिन्ता का क्या कारण है ?

बोलते अब क्यों नहीं मुझ से पिता जी साध से ?
बोलिये चिन्तित हैं मेरे कौन से अपराध से ?

अश्व०—(स्वत) आह ! अब क्या उत्तर दूँ ? मैं जिस चिन्ता की चिन्ता में भस्म हो रहा हूँ क्या इसे बतला दूँ ? क्या इसे भी अपनी चिन्ता से चिन्तित बना दूँ ? नहीं, नहीं यह पिता का कर्तव्य नहीं है ! वह चिन्ता मेरे लिये ही है और जब तक भाग्य–सुख का दिन न दिखलाये, तब तक उसका दुख मैं ही सहूँगा। उसकी व्यथा–श्रोत में मैं ही बहूँगा।

सावित्री–बोलिये पिता जी, बोलिये ! आप चुप क्यों होगये ?

हैं ! यह आपके नेत्रों से अश्रु-विन्दु क्यूं टपक रहे हैं ? आपको मेरी सौगंद है, सत्य बताइये कि आपको किस वात की चिन्ता है ? किस वात की व्यथा है ?

ये पुष्प विम्ब कुम्लाये हैं क्यों, मनमें वह कौन मलिनता है।
मन कौन व्यथा से है व्यथित हुआ, वह कौन वस्तु की चिन्ता है।

अश्व—वेटी ! चिन्ता किस वस्तु की है ? तेरी, तेरे भावी जीवन की ! तेरे प्राण-धनकी !

जहाँ आनन्द से तू रह सके वह घर नहीं मिलता !
कि तेरे योग्य दुनियाँ मे मुझे कोई वर नहीं मिलता !
तुझे सौपूँ जिसे ऐसा न कोई वर लखाता है !
तुझे रक्खूँ अगर घर में तो मेरा धर्म जाता है !
वस मुझे चिन्ता है तेरी और तेरे चाह की।
घेर रक्खा है मुझे चिन्ता ने तेरे व्याह की ॥

(सावित्री का लज्जा से अपना सर झुका लेना)

सुलो—पिता जी ! सम्भव है, कि इस विषय में मेरी सखी लज्जा से कुछ न कह सके, अत मैं निवेदन करती हूँ कि जैसे श्री आदि शक्ति सती-शिरोमणि श्रीपारवती जी ने अपनी तपस्या से श्री नीलकंठेश्वर—भगवान् शंकर को प्राप्त कर लिया था-उसी भाँति आप भी श्री सावित्री देवी को कुल पुरोहित और राजमंत्रियों के साथ तीर्थों में भ्रमण करने की आज्ञा प्रदान कीजिये और इनके अनुरूप वरको ढूढ़ लेने का भार इन्हें ही दीजिये !

सुमुखी-और मै भी देखती हूं कि आप आज कल इनके विवाहकी चिन्ता से इतने चिन्तित हैं कि आपका ध्यानही दूसरी ओर नहीं जाता है। अस्तु इससे राज प्रवन्ध में भी वाधा पडती हो-सम्भव है। आपका जो धर्म था उसमें आपने तो

कोई बात उठा नहीं रक्खी ? अब भावी पर किसका अधिकार है ? अत यह कार्य इन्हीं को सौंपा जाय, इस कार्य्य का पूर्ण-भार इन्हीं को दिया जाय यही बिचार है।

पुरोहि०—ठीक है ! मैं भी इस राय से सहमत हूँ।

शुद्ध स्वयम्वर की प्रथा, जानत है संसार।—
चुनती हैं कन्या स्वत, वर पहिना कर हार॥
इनके काम का दीजिये, इनही पर यह भार।
निज हिय से यह ढूंढ़ लें, वर अपने अनुसार॥

अश्व०—ठीक तो है, परन्तु पुत्री सावित्री का प्रेम मुझे इसे अपनी आँखोंसे ओट नहीं करने देता है, वर्ना और कोई भी बात विचारना नहीं है, कारण की यह प्रथा तो धर्म शास्त्र और कुल कान के अनुसार है।

पुरोहित—तो फिर आपका अधिक सोच विचार बेकार है, आखिर जब कन्या का दान करके उसे अन्य के स्वाधीन बनाना ही है, तो फिर यह प्रेम का प्रवाह नि सार है !

मिले इनसादि इनको वर इसीमें अब बडाई है।
विदा करिये इन्हें अब शीघ्र इसमें ही भलाई है॥

अश्व–क्या आपकी भी ऐसी ही सम्मति है ?

पुरोहित हाँ ! इसी युक्ति से कीजिये, चिन्ता का निस्तार।
इसी युक्ति से होयगा, दुखसों बेड़ा पार॥
जगदीश्वर ही करेंगे, कन्या का उद्धार।
ईश सहारे छोड़िये, रक्षक हैं करतार॥

अश्व०-अच्छी बात है, यदि सबका ऐसाही विचार है, तो मुझे भी स्वीकार है। हृदय तो एक पल भी इसे पलक की ओट करना नहीं चाहता है, पर अश्वपति धर्म और कर्तव्य से लाचार है ! जा, पुत्री सावित्री ! जा, श्रीमान् कुल पुरोहित

जी और अपनी सखियों को साथ लेकर, संसार स्वयम्बर के सभा-मण्डप में अपने योग्य वर को ढूँढ़ने के लिये जा। चलो, तुम राजमहल में चलकर अपने प्रस्थान की तैयारी करो और मैं भी साथ जाने के लिये सिपाही, रथ, पालकी और मंत्रियों को-मार्ग के सुखद्-सामानों के सहित तैयार करता हूँ। चलिये पुरोहित जी! आप भी तैयारी कीजिये और प्रस्थान की सायत विचार कर बता दीजिये।

पुरोहित-चलिये। (अश्वपति के साथ पुरोहित जी का जाना)

सुलो—क्यों सखी! अब क्या सिर झुकाये खड़ी हो? अरे अब तो तुम्हे खुश होना चाहिये और मुझे यथेष्ट इनाम देना चाहिये?

सुमु०—वाह! इनाम कैसा माँगती है?

सुलो०—ऐसा, कि हमने यात्रा की आज्ञा दिलाई है।

सुमु-पर अभी कार्य तो नहीं हुआ है? जब इनके अनुसार कोई वर मिल जायगा, तब तुम्हें इनाम माँगने का हक भी हो जायगा।

सुलो०—अच्छा, यही सही, पर वचन तो ले लेने दो!

सुमु०-हाँ! सो ठीक है, (सावित्री से) कह दो सखी! कि जब मेरा विवाह होगा तब जो माँगोगी दे दूँगी।

सुलो०—(छेड़कर) बोलो स्वीकार है?

सुमु०—अरे कह भी दो!

सावित्री-माई! हाथ जोड़ती हूँ! इस समय हँसी न करो।

सुलो०—वाह! यही तो हँसने का समय है, भला अब भी न हँसोगी तो हँसोगी कब? क्या साथ छोड़कर चली जावोगी तब?

सुमु०-बहन! अधीर न हो, धैर्य धरो! परमात्मा सब कुशल ही करेगा, तुम्हारे इच्छानुसार वर ज़रूर मिलेगा।

गाना-सुलोचना, सुमुखि-मिलैगा गोरी, तोहे गोरा साजना।

सावित्री-जावोरी सखियाँ, छेड़करो मोसो आजना ॥मि०

सुमुखि—गोरे गोरे गालों वाला;
नागिन से बालों वाला।

सुलोचना-सुन्दर दिल का उजाला,
मोहन मनहर मतवाला।

सुमुखि-ऐसा मिलैगा तोरा साजना।

सावित्री—छेड़ो ना आली।

सुलो०,सुमु-मोसो करो अब लाजना ॥ मि०

(गाते गाते सबका प्रस्थान)



अंक पहिला—दृश्य सातवाँ।

——*——

स्थान—लोभराम का साधारण मकान।

(लोभराम का अपनी कन्याके बडी हो जाने की खुशीमें झूमते हुए प्रवेश)

लोभ—आया, आया, आखिर अपने भाग्य के सुभीते का वक्त भी आया। बस अब आनन्द ही आनन्द है, जैसे आकाश में सबसे सुन्दर चन्द, वैसेही संसार में सबसे सुन्दर मेरी तरुण-कन्या का मुख चन्द है। चन्द में कलंक है और मेरी प्यारी बेटी का मुँह निष्कलंक है। बस तो चारों ओर से छनाछन और झनाझन शब्द की ही झन्कार है।

झक्की—तो ले लपक्के, बस सेटजी! अब आपके बारह वर्ष का वादा भी समाप्त हुआ, अबतो मेरी तनख्वाह का रुपया चुका दीजिये अपना वादा पूरा कीजिये?

लोभ-मिल जायगा,भाई। अब मुझे भी रुपया मिल जायगा

झक्की-हैं! आपने तो फिर वही पुराना लटका निकाला अजी ओ सेट साहब। अब तो मिल जायगा वाली बात को छोड़िये और धीरे से रुपया गिन दीजिये।

लोभ—मिल जायगा, अब शीघ्र ही रुपया मिल जायगा देख! जैसे इतने दिनों तक संतोष किए चुप रहा, वैसे थोडे दिनों तक और सन्तोष कर फिर रुपया मिल जायगा।

झक्की—सन्तोष कैसे करूँ? कहीं से रुपयों के आने की सूरत भी देखूँ या खाली मिल जाने की उम्मीद पर ही चुप बैठा रहूँ? मिल जाने की आशा पर मरता हूँ?

लोभ-सूरत ! अरे अब तो सूरत ही सूरत है, देख आज ! मेरी पुत्री से विवाह करने के लिये सेठ लम्पट राम जी आने वाले हैं। यदि किस्मत ने गवाही दिया, मेरा और उनका सौदा पट गया तो फिर दो चार रोज मेंही रुपयोंकी वर्षा शुरू हो जायगी। अपनी दरिद्रता भी हट जायगी और तेरे दिलका कँवल भी खिल जायगा-यानी मुझे भी रुपया मिल जायगा।

झक्की—तब तो ले लपक्के, पर सेठ जी ! यदि ये सौदा कम वेस के कारण बिगड़ गया, तब तो फिर मामला कोरम कोरा रह जायगा ?

लोभ-वाह ! यदि वो काफी रुपया न दे सकेंगे तो क्या और कोई गाँहक ही न चढ़ेंगे, जो हम कोरे २ बैठे रहेंगे ?

झक्की-शायद और कोई न आये, क्योंकि अब तक और कोई गाँहक तो आया ही नहीं-जो आशा बनी रहती।

लोभ-अरे मूर्ख ! अब तक खबर ही किसे थी कि मैं कन्या को ऐसे घर में दूँगा जिससे काफी रुपया वसूल कर लूँगा।

झक्की—तो फिर अब लोगों को कैसे मालूम हो जायगा, जो कोई यहाँ तक आयगा ?

लोभ—ऐसे, कि जब मैंने ऐसे कार्य बनते न देखा तो कोई एक रईस दलाल, अपना ठाट बढाने वाले बिरादरियोंके चोधरी वर ढूँढने वाले ब्राह्मण और नाइयों से कह दिया है, कि मेरी ऐसी राय है ! बस अब क्या है ? अब अपना कार्य सहज ही में बन जायगा और तुझे भी तेरी तनख्वाह का रुपया मिल जायगा। घबडा नहीं तेरा हृदय-कमल खिल जायगा।

झक्की-तबतो ले लपक्के, मगर सेठजी ! क्या रईस लोग भी दलाली करते हैं ? चौधरी, सरदार और नाई ब्राह्मण भी कन्या विक्रय की दलाली के रुपये से अपना घर भरते हैं ?

लोभ—क्यों, इसमें हानि ही क्या है ? अरे ये तो जगत विख्यात बात है। कि " चमड़ी जाय तो जाय पर दमड़ो न जाय " भला ऐसा कौन मूर्ख होगा जो आती हुई लक्ष्मी को न लेगा ?

झक्की—तब तो ले लपक्के !

लोभ—अवश्य ! सुन, इस धन के लिये मनुष्य चोरी, डाँका, जुआ, विश्वासघात, यानी अनेकों पाप करता रहता है, फिर भला यों मुफ्त के माल को कोई कैसे छोड़ सकता है ?

झक्की—जो अच्छे लोग हैं वह बदनामी से डरते हैं और आप अच्छे लोगों ही को इस काम के शरीक कहते हैं ?

लोभ-मिल जायगा, तुझे इसका भी उत्तर मिल जायगा !

सुन ! धन कभी भी घृणित नहीं होता है। फिर इसमें बद्-नामी ही काहे की ? ये बात खुलनी ही कहाँ है ? क्योंकि लोग ऐसा पैसा अपने नाम से थोडे ही लेते हैं, वह भी किसी दूसरे आदमी को देने का बहाना बता देते हैं।

झक्की—तब तो यह बहुत ही अच्छा रुजगार है ?

लोभ—और नहीं तो क्या, " हलदी लगे न फिटकिरी रंग चोखा। "

झक्की-तो फिर ले लपक्के,यह रोजगार तो खूब है अनोखा (बाहर से आवाज आती है) सेठ जी घर में हैं ?

झक्की-जी नहीं, कहीं बाहर गये हैं।

लोभ-अरे ऐ ! क्या करता है ? अरे कौन है,यह तो देखले !

झक्की-क्यों, देखने की क्या जरूरत है ? आप ही ने तो कहा था कि जो कोई मुझे खोजने आया करे-कह दिया करना कि नहीं हैं।

लोभ-अरे वह तो तकाज़गीरों के भय से कहा था न ?

लोभ-स्वरूप! अरे अब तो सूरत ही सूरत है, देख आज! मेरी पुत्री से विवाह करने के लिये सेठ लम्पट राम जी आने वाले हैं। यदि किस्मत ने गवाही दिया, मेरा और उनका सौदा पट गया तो फिर दो चार रोज मेंही रुपयोंकी वर्षा शुरू हो जायगी। अपनी दरिद्रता भी हट जायगी और तेरे दिलका कंवल भी खिल जायगा-यानी मुझे भी रुपया मिल जायगा।

झक्की—तब तो ले लपक्के, पर सेठ जी! यदि ये सौदा कम पैसे के कारण बिगड गया, तब तो फिर मामला कोरम कोरा रह जायगा?

लोभ-वाह! यदि वो काफी रुपया न दे सकेंगे तो क्या और कोई ग्राहक ही न चढेंगे, जो हम कोरे २ बैठे रहेंगे?

झक्की-शायद और कोई न आवे; क्योंकि अब तक और कोई ग्राहक तो आया ही नहीं-जो आशा बनी रहती।

लोभ-अरे मूर्ख! अब तक खबर ही किसे थी कि मैं कन्या को ऐसे घर में दूँगा जिससे काफी रुपया वसूल कर लूंगा।

झक्की—तो फिर अब लोगों को कैसे मालूम हो जायगा, जो कोई यहां तक आयगा?

लोभ—ऐसे, कि जब मैंने ऐसे कार्य बनते न देखा तो कोई एक रईस दलाल, अपना ठाट बढ़ाने वाले बिरादरियोंके चौधरी वर ढूंढने वाले ब्राह्मण और नाइयों से कह दिया है, कि मेरी ऐसी राय है! बस अब क्या है? अब अपना कार्य सहज ही में बन जायगा और तुझे भी तेरी तनख्वाह का रुपया मिल जायगा। घबडा नहीं तेरा हृदय-कमल खिल जायगा।

झक्की-तबतो ले लपक्के, मगर सेठजी! क्या रईस लोग भी दलाली करते हैं? चौधरी, सरदार और नाई ब्राह्मण भी कन्या विक्रय की दलाली के रुपये से अपना घर भरते हैं?

लोभ—क्यों, इसमें हानि ही क्या है ? अरे ये तो जगत विख्यात बात है। कि " चमड़ी जाय तो जाय पर दमड़ी न जाय " भला ऐसा कौन मूर्ख होगा जो आती हुई लक्ष्मी को न लेगा ?

झक्की—तब तो ले लपक्के !

लोभ—अवश्य ! सुन, इस धन के लिये मनुष्य चोरी, डाँका, जुआ, विश्वासघात, यानी अनेकों पाप करता रहता है, फिर भला यों मुफ्त के माल को कोई कैसे छोड़ सकता है ?

झक्की—जो अच्छे लोग हैं वह बदनामी से डरते हैं और आप अच्छे लोगों ही को इस काम के शरीक कहते हैं ?

लोभ-मिल जायगा, तुझे इसका भी उत्तर मिल जायगा ! सुन ! धन कभी भी घृणित नहीं होता है। फिर इसमें बद-नामी ही काहे की ? ये बात खुलनी ही कहाँ है ? क्योंकि लोग ऐसा पैसा अपने नाम से थोड़े ही लेते हैं, वह भी किसी दूसरे आदमी को देने का बहाना बता देते हैं।

झक्की—तब तो यह बहुत ही अच्छा रुजगार है ?

लोभ—और नहीं तो क्या, " हलदी लगे न फिटकिरी रंग चोखा। "

झक्की-तो फिर ले लपक्के,यह रोजगार तो खूब है अनोखा (बाहर से आवाज आती है) सेठ जी घर में हैं ?

झक्की-जी नहीं, कहीं बाहर गये हैं।

लोभ-अरे ए ! क्या करता है ? अरे कौन है,यह तो देखले।

झक्की-क्यों, देखने की क्या जरूरत है ? आप ही ने तो कहा था कि जो कोई मुझे खोजने आया करे-कह दिया करना कि नहीं हैं।

लोभ-अरे वह तो तकाजगीरों के भय से कहा था न ?

झक्की-तो क्या अब तकाजगीर मर गये क्या? तब तो ले लपक्के

(दर्वाजा खटकने की आवाज आती है)

लोभ—अरे ले लपक्के के बच्चे! देख कोई दे रहा है दरवाजे पर भक्के।

झक्की-तब ले लपक्के!

[झक्कड़ आगे बढ़ता है]

लोभ-अरे चला कहाँ?

झक्की-दर्वाजा खोलने!

लोभ-पर सुन तो!

झक्की-सुनने की क्या जरूरत? मैं दर्वाजा खोल देता हूँ। और आने वाले को आपके कमरे का रास्ता बता देता हूँ।

लोभ-अबे गद्धे, ऐसा न करना।

झक्की—तब फिर क्या करूँगा उससे कह दूँगा कि वो नहीं हैं?

लोभ०-नहीं पहिले उसका नाम पूछना, फिर यदि कोई तकाज़गीर हो तो बहाना कर देना, और जो सेठ लम्पट राम जी आये हों, तो उन्हें आदर सहित बुला ले आना।

झक्की-सेठ लम्पट रामजी आये होंगे? तब तो ले लपक्के! (बाहर से आवाज आती है) अरे सेठ जी हैं या नहीं, जवाब तो दो?

लोभ-अरे जा भी देख आवाज तो उन्हीं के जैसी है।

झक्की०-हाँ! तब तो ले लपक्के!

[जाता है]

लोभ०—बड़े झक्की नौकर से पाला पड़ा है।

इमली जो मैं कहूँ तो ले आता है आम को।
नमस्कार करता है वह दूसरे ही काम को॥

(झक्की के साथ अस्सी साल के बुड्ढे सेठ लम्पट राम जी का प्रवेश)

लम्पट—नमस्कार सेठजी ! नमस्कार !

लोभ-भाई नमस्कार ! वाह ! आपतो वादेके खूब हैं पक्के?

झक्की-(स्वत) तब तो ले लपक्के !

लम्पट—भाई साहब ! वादे पक्के क्या मैं आज एक कार्य में फँस गया था, नहीं तो मैं इससे भी जल्दी हो आता, क्योंकि आपकी कन्या को देखने के लिये दिल है घबड़ाता।

लोभ०—हाँ ?

लम्पट-हाँ, बस अब अपनी कन्या को शीघ्रही बुलाइये।

झक्की-(स्वत) ले लपक्के।

लोभ—बहुत अच्छा, मैं कन्या को बुलाता हूँ और फिर विवाह की बात चलाता हूँ। पर जरा बैठिये, दूर से आये हैं, ठंढे हो लीजिये-तब बातें करिये। (झक्की से) अरे झक्की ! जरा सेठ जी के लिये आसन तो ले आ !

झक्की-अजी श्रीमान् ! इन्हें जल्दी पड़ी है, और आप बैठने को कह रहे हैं। पहिले काम की बात तो कर लीजिये, फिर आसन दीजिये और जहाँ तक हो सके खूब खातिर कीजिये।

लोभ-अबे जाना है, या कथा सुनाता है ?

झक्की—लीजिये, चला जाता हूँ !

(जाना चाहता है-लम्पट रोककर)

लम्पट—नहीं, नहीं, उसकी कोई जरूरत नहीं है ! कारण कि मुझे बिलकुल ही फुरसत नहीं है।

लोभ—अच्छी बात है। (कन्या को बुलाता है) अरी इन्दू ओ इन्दू।

इन्दु—(आकर) क्या है पिता जी ?

लोभ—देख ये सेठ जी तेरे विवाह के निमित्त तुझे देखने के लिये आये हैं। इन्हें प्रणाम कर।

इन्दु—ये कौन हैं, क्या दूल्हा के बाप हैं ?

झक्की—नहीं लड़के के दादे।

इन्दु—तब तो पांव लागूं दादा जी।

लम्पट—हैं ! कैसी जबां दराजी।

इन्दु—दुर पाजी !

लोभ—अरी बावरी ! ये दादाजी नहीं, तेरे होने वाले जमाई हैं।

इन्दु-तब तो ये कोई सौदाई हैं।

लोभ-चुप ना समझ (सेठसे) कहिये, आप राजी हैं ?

इन्दु-ये तो पाजी हैं। (जाना चाहती है)

लोभ-अरे ठहर तो, कहाँ भागी जाती है ?

इन्दु-इसके मुँह में आग लगाने। (चली जाती है)

लम्पट-इतनी तेजी, ओफ !

झक्की-जी हां, जैसे बिजली हो बिजली !

लोभ-कहिये आपको पसन्द आई या नहीं ?

लम्पट-ठीक तो रही, पर इसकी डपट से तो मेरी नाड़ी सूख गई। रही सही जिन्दगी शेष हो गई।

लोभ-अजी अभी बच्ची है न बच्ची।

झक्की-जी हाँ, बिलकुल ही नासमझ है। जिस तरह नई फँसाई हुई चिड़िया तिल्ली तोडकर उड़ जाना चाहती है-वैसे ही अभी यह भी विवाह के नाम से घबड़ाती है।

लम्पट-हाँ ! तुम्हारी बात तो ठीक जँचती है।

झक्की—तब तो ले लपक्के।

लम्पट—हैं! इस ले लपक्के का क्या मतलब है?

लोभ०—इसकी सखुन तकिया है, सखुन तकिया!

लम्पट०-अच्छा, तो बतलाइये कि आप अब क्या चाहते हैं?

झक्को—(स्वत) रुपया।

लोभ०-मैं तो कुछ भी नहीं चाहता हूँ, कारण कि मुझे ईश्वर की दया से कमी ही क्या है? जो मैं कन्या का धन चाहूँगा?

झक्को—बात तो ठीक है, भला हमारे सेठ साहब को ऐसी क्या जरूरत है, जो लड़की बेचेंगे? (दर्शकों से) क्यों? ठीक है न?

लम्पट-फिर?

लोभ-यही कि वास्तव में बात यह है, कि मेरी कोई संतान जीती नहीं थी, सो इसकी माँने इसके जीने के लिये यह मनौती मानी थी, कि यदि लड़की जीयेगी तो मैं इसे बेंच कर जो धन आयेगा, उससे ऐसा प्रबन्ध करूँगी कि जिससे नित्य ब्राह्मण लोग इसके नाम पर भोजन पाया करें। सो उसी लिये यह अड लगी हुई है, वर्ना मुझे अपने लिये क्या कमी है?

झक्को-सेठ जी बड़े ही साफ दिलके आदमी हैं, बिल्कुलही सच बोलते हैं, (दर्शकों से) क्यों ठीक है न?

लम्पट-अच्छा, तो फिर आप इसकी न्योछावर बतलाइये?

लोभ-क्या कहूँ भाई साहब! मुझे तो शर्म आती है?

झक्को-और मुझे भी शर्म आती है। (दर्शकों से) क्यों और भी किसी को शर्म आती है या नहीं?

लम्पट-मगर शर्म से तो काम न चलेगा? कुछ तो कहना ही पड़ेगा। बिना कहे काम न चलेगा।

लोभ—कैसे कहूँ!

लम्पट०-कहिये भी तो!

इन्दू—(आकर) क्या है पिता जी ?

लोभ—देख ये सेठ जी तेरे विवाह के निमित्त तुझे देखने के लिये आये हैं। इन्हें प्रणाम कर।

इन्दु—ये कौन हैं, क्या दूल्हा के बाप हैं ?

झक्की—नहीं लड़के के दादे।

इन्दु—तब तो पांव लागूँ दादा जी।

लम्पट—हैं! कैसी जबाँ दराजी।

इन्दु—दुर पाजी!

लोभ—अरी बावरी! ये दादाजी नहीं, तेरे होने वाले जमाई हैं।

इन्दु-तब तो ये कोई सौदाई हैं।

लोभ-चुप ना समझ (सेठसे) कहिये, आप राजी हैं ?

इन्दु-ये तो पाजी हैं। (जाना चाहती है)

लोभ-अरे ठहर तो, कहाँ भागी जाती है ?

इन्दु-इसके मुँह मे आग लगाने। (चली जाती है)

लम्पट-इतनी तेजी, ओफ!

झक्की-जी हाँ, जैसे बिजली हो बिजली!

लोभ-कहिये आपको पसन्द आई या नहीं ?

लम्पट-ठीक तो रही, पर इसकी डपट से तो मेरी नाड़ी सूख गई। रही सही जिन्दगी शेष हो गई।

लोभ-अजी अभी बच्ची है न बच्ची।

झक्की-जी हाँ, बिलकुल ही नासमझ है। जिस तरह नई फँसाई हुई चिड़िया तिल्ली तोड़कर उड़ जाना चाहती है-वैसे ही अभी यह भी विवाह के नाम से घबड़ाती है।

लम्पट-हाँ! तुम्हारी बात तो ठीक जँचती है।

झक्की—तब तो ले लपक्के।

लम्पट—हैं ! इस ले लपक्के का क्या मतलब है ?

लोभ०—इसकी सखुन तकिया है, सखुन तकिया !

लम्पट०-अच्छा, तो बतलाइये कि आप अब क्या चाहते हैं?

झक्की—(स्वत) रुपया ।

लोभ०-मैं तो कुछ भी नहीं चाहता हूँ, कारण कि मुझे ईश्वर की दया से कमी ही क्या है ? जो मैं कन्या का धन चाहूँगा ?

झक्की—बात तो ठीक है, भला हमारे सेठ साहब को ऐसी क्या जरूरत है, जो लडकी वेचेंगे ? (दर्शकों से) क्यों ? ठीक है न ?

लम्पट-फिर ?

लोभ-यही कि वास्तव में वात यह है, कि मेरी कोई संतान जीती नहीं थी,सो इसको माँने इसके जीने के लिये यह मनौती मानी थी, कि यदि लडकी जीयेगी तो मैं इसे बेंच कर जो धन आयेगा, उससे ऐसा प्रवन्ध करूँगी कि जिससे नित्य ब्राह्मण लोग इसके नाम पर भोजन पाया करें। सो उसी लिये यह अड लगी हुई है, वर्ना मुझे अपने लिये क्या कमी है ?

झक्की-सेठ जी बडे ही साफ दिलके आदमी हैं,बिल्कुलही सच बोलते हैं, (दर्शकों से) क्यों ठीक है न ?

लम्पट-अच्छा, तो फिर आप इसकी न्योछावर बतलाइये?

लोभ-क्या कहूँ भाई साहब ! मुझे तो शर्म आती है ?

झक्की-और मुझे भी शर्म आती है। (दर्शकों से) क्यों और भी किसी को शर्म आती है या नहीं ?

लम्पट-मगर शर्म से तो काम न चलेगा ? कुछ तो कहना ही पडेगा। बिना कहे काम न चलेग ।

लोभ—कैसे कहूँ !

लम्पट०-कहिये भी तो !

लोभ—वही जो मैंने कहा था !

लम्प०—क्या बीस हज़ार ?

लोभ०—हाँ क्योंकि इससे कम में कैसे हो सकता है ?

झक्की—(स्वत) क्योंकि तेरह वर्ष के पालन पोषन का खर्च मय सूद दर सूद के चाहिये !

लम्प०—ज़रा सोच, समझ कर कहिये !

लोभ—क्या सोचूँ ? कुल अपने लिये थोड़े ही चाहता हूँ ? आखिर सब धन तो ? धर्म ही में लगेगा।

झक्की—ठीक है, क्योंकि हमारे सेठ जी को कमी ही क्या है ? ये तो धर्म का मामला है। क्यो ठीक है न ?

लोभ०-ठीक है तू तो जानता ही है कि मैं ऐसा क्यों करता हूँ ?

झक्की-धर्म के लिये ? तब तो ले लपक्के !

लम्प०-भाई, ये तो बहुत है ! कुछ कम कीजिये ?

लोभ०-हरे ! हरे ! अरे यह तो धर्म का काम है ! इसमें "तो आम के आम और गुठलियों के दाम हैं" !

झक्की-सही है, क्योंकि यह धर्म का काम है !(दर्शकोंसे) कन्या विक्रय धर्म का नाम है-क्यों ठीक हे न ?

लम्पट-तो आप कुछ भी कम न करेंगे ?

झक्की-भला धर्म-काम में कहीं कमी बेशी होती है ? और फिर आप तो इस बुढौती में दूल्हन की दुल्हन पायेंगे और धर्म का धर्म कमायेंगे ! (दर्शकों से) आप यमपुर जायेंगे और उसे किसी और के लिये छोड़ जायेंगे-क्यों ठीक है न ?

लोभ०-और क्या, इसमें तो आपको कुछ सोचना ही न

चाहिये। लाइये, यदि आपको स्वीकार हो तो रुपया लाइये और आनन्द से अपना विवाह रचाइये।

झक्की—और मुफ्त में धर्म कमाइये।

लम्पट-अच्छी बात है। तो अब आप कल कोठी में आकर रुपया ले आइयेगा और विवाह का प्रबन्ध ठीक कराइयेगा।

लोभ—तो आप पक्का वादा करते हैं न ? बोलिये तो फिर मैं और किसी से बात चीत न करूँ और घेरने वालों को साफ उत्तर दे दूँ।

लम्पट-अवश्य! मैं पक्का वादा करता हूँ और जो आप को यकीन न हो, तो बाहर मेरी गाड़ी खड़ी है, उसी पर मेरे साथही चले चलिये और सारा टंटा अभी ही तय कर दीजिये आइये मैं बाहर चलता हूँ! आप भी आइये !! (जाना)

झक्की—तब तो ले लपके!

लोभ—ऐसी बात है तो मिल जायगा! अब हमारा और आपका दिल भी मिल जायगा।

झक्की—और मेरे हृदय का कवल भी खिल जायगा।

गाना—आप हैं किस्मत के पक्के, काम भये सब नक्के।

लोभ—सोने की चिड़िया को फंदे में फाँसा।
पर में लगा के हिकमत का लासा॥
ओटोंसे टट्टी के खेला शिकार, मारा क्या तीर निशाने से तक्के।

झक्की—हाँ में हाँ मैंने भी कैसा मिलाया।
कैसी सफाई से काम बनाया॥
जाने न पाये धन हाथों में आया।
मिल जायेगा नहिं, ले लपक्के॥ (गाते २ जाना)

——*——

अंक पहिला—दृश्य आठवाँ ।



स्थान—दुमतसेन के किले का पिछला भाग ।

(रात का समय है अँधेरा छाया हुआ है पानी बरस रहा है और बिजली चमक रही है । गजपति सिंह चुपचाप अपनी फौज के साथ आता है और खड़ा हो जाता है)

गजपति—बस, यही समय है । उस अहंकारी दुमतसेन से बदला लेने और किले पर उड़ते हुए उससे राज्य-पताका को रौंद कर अपनी विजय-पताका फहराने का यही समय है।

यही मौका है शत्रू के शिरों पर वेग चढ़ जाओ ।
है बादल जोर दिखलाता तो तुम भी जोर दिखलाओ ॥
इधर पानी बरसता है, उधर रिपु रक्त बरसाओ ।
इधर बिजली चमकती है, उधर तलवार चमकाओ ॥
घटा घेरी है तुम भी घेर लो दुश्मन को घेरे में ।
अँधेरा कर दो क़िस्मत शत्रु का बढ़ कर अँधेरे में ॥

वीर—ठीक है ! लावो लावो कमंद लावो और उसी के सहारे से क़िले पर चढ़ जावो ! मरदानगी दिखाओ, तलवार चलाओ और क़िले पर अपनी विजय-पताका फहरावो ।

(बैण्ड बजता है आधे सैनिक कमंद फेंक कर क़िले के ऊपर चढ जाते हैं और आधे बाहर रह जाते हैं क़िले का चोर दर्वाजा खुलता है दोनों ओर के सैनिकों मे लडाई होती है गजपतिसिंह के सैनिक दुमतसेन को धर लाते हैं गजपतिसिंह की विजय होती है । दुमतसेन का पताका क़िले से उतार दिया जाता है और गजपतिसिंह का विजय पताका फहराता है ।)

गज—यही है यही है, इस युद्ध की पूर्णाहुती यही है! बोल, बोल, ऐ काल के कौर! बोल, क्या इसी मुंह से मेरी आधीनता अस्वीकार की थी?

कहाँ है तेरा मान गौरव वो बल?
इसी फौज पर तूँ रहा था मचल?
कहाँ तेरा साहस औ धनमान है?
बुला तो कवन वीर बलवान है?
जो बलवान हो बल दिखाये मुझे?
मेरे कर से आकर बचाये तुझे?

घुम—चुप रह क्षत्रिय कुलाङ्गार, कायरों का अवतार! चुप रह। अधिक शेखी न दिखा, यदि वीरता का अभिमान रखता है, तो ला तलवार इधर ला, फिर मेरे सामने आ। अँधेरी रात में चोरों की भाँति आने वाले, सोये हुये वीरों पर तलवार चलाने वाले, सोते हुये बूढ़े शेर को धोखे से फंदे में फँसाने वाले—बोदे नामर्द! बातें न बना!

बन कर के आता वीरों के तौर से!
नादान जाके शान लगाना ये और से!
तलवार दे लड मुझसे कमा नाम जगत में!
फिर देख ले क्या शक्ति है बुड्ढे के रक्त में!

वीर—सावधान! अभिमान में आकर इस बूढ़े सिंह को बंधन से मुक्त न कर देना, तलवार न दे देना नहीं तो सारा बना बनाया काम बिगड़ जायगा, सारे परिश्रमों पर पानी फिर जायगा। हाथ मसल २ कर पछताना ही रह जायगा।

पासा ही पलट जायगा बुड्ढे के वार से।
जायेगी बदल जीत की बाजी हार से॥

राज—नहीं, क्या मैं ऐसा मूर्ख हूं जो मुट्ठी में आया हुआ शिकार छोड़ दूँगा । नहीं, बल्कि जिससे यह संसार में फिर कभी भी मेरा सामना करने योग्य न रहे-इस लिये इसकी दोनों आँखों को फोड़ दूँगा और इस तरह से इसे संसार के कार्यों से मुक्त कर दूंगा ।
(द्युमत्सेन की आँखों को उँगलियों से फोड देता है टेब्लो बनता हे)

ड्राप ।



अंक दूसरा-दृश्य पहिला ।



स्थान-तपोभूमि ।

(महर्षि गौतम का अपने शिष्यों के साथ नारायण का कीर्तन करते हुए दिखाई देना)

गौतम और सब शिष्य — गाना ।

कब मन गोविन्द को गुन गेहैं ।
फिर २ नर तन नाहीं मिलिहैं,
समय गये पछितैहैं ॥ कब० ....
जात नहीं सङ्ग धाम धरा कुछ,
ध्यान धरम सँग जैहैं ॥ कब० .....
गुप्त जो गावत गुण गोविन्द को ।
मन वाछित फल पैहैं ॥ कब०......

गौतम—करुणा सुनि करुणानिधे, कर करुणा की दृष्टि।
सूखत खेती धर्म की, करो कृपा की वृष्टि॥
पाला पाप का कर पृथक, पुण्यन पोषन वृष्टि।
सिरजो सिरजनहार नहीं, नष्ट होत है सृष्टि॥

हा! जो संसार स्वर्ग से भी अधिक सुरम्य सुन्दर और शोभायमान था अब वही घोर तम-नर्क से भी निकृष्ट हुआ चाहता है। जहाँ संख के सुन्दर स्वरों के साथ शाम वेद का सांगीत सागर आनन्द और उमंग से बहा करता था, अब वहीं पर पापियों की पाप-वासना से पूर्ण पुण्यात्माओं को परास्त करने के लिये रण भेरी बजा करती है। जहाँ अहिंसा परमो-धर्म यतो धर्म स्ततोजय का पुण्य-पाठ पढ़ा जाता था, अब वहीं पर स्वार्थ के सेवक, कपट के कर्मचारी, पाप के पुतले हिंसा से अपनी आत्मा को आह्लादित करने के लिये लाला-यित रहते हैं! यद्यपि पशु पक्षी मांसाहारी होते हैं, पर वह अपनी जाति के जन्तुओं पर वार नहीं करते हैं, किन्तु मनुष्य जो सर्वज्ञानी होने का घमण्ड करते हैं, वह अपने थोड़े लोभ और ईर्षा के कारण अपने ही स्वजाति-भाइयों का छल बल और अनेकों भाँति से शिकार करते हैं। हा मनुष्य! तेरा निस्तार कैसे होगा? ईश्वर इस अधर्म से संसार का उद्धार कैसे होगा?

१ शिष्य—हाँ, देखिये न महाराज! द्युमत्सेन विचारे की उन्हीं अन्याई, अधर्मियों के कारण कैसी सोचनीय अवस्था हो रही है! उसके जीवन की कैसी बुरी व्यवस्था हो रही है!

किले अस्थान पे कुटिया औ उपवनकी जगह बन है!
जहाँ था राज सिंहासन वहाँ तिनके का आसन है!
जो था पहले प्रजापति वो निआश्रित और निर्धन है!

प्रजा पालनके चिन्तक को उदर पालन का चिंतन है !
२ शिष्य—हाँ, ठीक है । क्योंकि —
दास जिसके सैकड़ों थे, दास है संसार का !
आखेट है दुनियाँ में वह, नीचों के अत्याचार का !

३ शिष्य-और उस सुकुमार राजकुमार सत्यवान की दशा पर तो मुझे बहुत ही दया आती है परन्तु दैव इच्छा !

अंकित लेख ललाट का, मेटि सकै नहि कोय।
टले नहीं होतव्यता, होनी हो सो होय॥

(सावित्री का सखियों से घिरी हुई मन्त्री और पुरोहित के साथ प्रवेश)

मन्त्री-मेरा विचार तो आज इसी तपोवन में विश्राम करने का है।

सावित्री—परन्तु ये कौन से महर्षि का आश्रम है ?

पुरोहित-यह स्थान महर्षि गौतम के तपोभूमि के नाम से विख्यात है। देखिये महर्षि जी भी तो सामने ही खडे हैं।

सावित्री-कहाँ ?

पुरोहित-वह देखिये !

सबका—(पास जाकर) ऋषिराज को सादर प्रणाम !

गौतम-प्रसन्न रहो ! आयुष्मान हो ! धर्म में तत्पर रहो !

सावित्री-(पैर छूकर) भगवन् ! प्रणाम करती हूँ !

गौतम—योग्य वर प्राप्त कर सौभाग्यवती हो (सावित्री रोती है) हैं तू रो क्यों रही है ? मैं तुझे सौभाग्यवती का आशीर्वाद दे रहा हूँ और तू रुदन करती है ?

सुमु—श्रीमान् ! यही तो एक चिन्ता है जिसके कारण हृदय में घोर मलिनता है।

गौतम—वह क्या ?

सुमु—यही कि—

सखी के अनुकूल कोई योग्य वर मिलता नहीं।
बस इसी कारण से इनका हिय कमल खिलता नहीं॥
सुरस सौन्दर्य सौरभ संकलित स्वर्गीय डाली है।
सुमन सींचे सुधाजल से कोई ऐसा न माली है॥

पुरोहित—हाँ श्रीमान्! इसीसे आपका आशीर्वाद सुन कर इसके हृदय का घाव फट गया और उसी सबब से इसके कमल नेत्रों से अश्रु-विन्दु टपक पड़े, कारण कि—

बह रही है व्यर्थ ही संसार सागर धार में।
खोज डाला योग्य वर मिलता नहीं संसार में॥

गौतम—तो इसमें अधीर होने की कौनसी बात है? क्या आप लोग संसार की सजावट को सज्जन, सुन्दर, सदाचारी और सात्विक पुरुषों से परे समझते हैं? जो इस भाँति धैर्य खोते हं—

जिस विरञ्चि ने रचा, यह सावित्री फूल।
वर भी विरचा होयगा, इसके ही अनुकूल॥

मन्त्री—इसे तो मैं भी समझता हूँ, कि जब ब्रह्मा ने पुष्प में मकरंद भरा है, तो भ्रमर की रचना भी अवश्य ही की होगी परन्तु केवल इतना समझ लेने से ही तो चित्त को शान्ति नहीं मिल सकती है। अस्तु, जहाँ तक मनोकामना पूर्ण न हो जाय, वहाँ तक हमारे जी में चैन कैसे पड सकती है?

गौतम—तो फिर अकुलाने से ही क्या हो सकता है?

मंत्री—कुछ नहीं, परन्तु यह तो प्राणीमात्र का स्वभाव ही है, कि जो संसार में है वह अपने कार्य-सिद्धि के लिये अकुलाया करता है।

गौतम०-हाँ परन्तु वह उससे निराश नहीं हो जाता है अत आप भी धैर्य का अवलम्बन करिये, आइये, आश्रम को चलिये संध्या हो चली है, अस्तु आज हमारा आतिथ्य स्वीकार कर मुझे कृतार्थ करिये, यदि ईश्वर चाहेगा तो आपका मनोर्थ सिद्ध हो जायगा !

मंत्री—चलिये, (सावित्री से) चलो राजकुमारी ! महर्षि का आशीर्वाद व्यर्थ न जायगा !

सावि०—चलिये ।

(सबका महर्षि गौतम के स्थान प्रस्थान)

———

अङ्क दूसरा—दृश्य दूसरा।



स्थान—तपोवनकी फुलवारी।

(एक ओर पहाड़ से झरना गिर रहा है, दूसरी ओर सूर्य भगवान अस्त हो रहे हैं, सत्यवान उस सुरम्य सुन्दर कानन से कुसुम कलिकाओं को चुन रहा है)

गाना।

सत्य—जगत है जीवन का सपना।
यहाँ पर कोई नहीं अपना॥ ज०——
बाग बगीचे हाथी घोड़े, पास रहे कल जिनके।
आज मारे मारे फिरते हैं चुनते वन के तिनके॥
नर बंधन में माया के जकड़े।
करते अपना अपना॥ जग०॥

अहा ईश्वर की लीला भी कैसी अपार है! जिसको पार कोई भी नहीं पा सकता है, हा! आज यह किसे ज्ञात था कि एक छत्रधारी राजाके गृह जन्म लेकर भी मुझे अपनी अवस्था इस हीनता से बितानी पड़ेगी। परन्तु इसके लिये ईश्वर को दोष देना भयानक भूल है, कारण ईश्वर किसी का भी अनिष्ट नहीं चाहता है, न वो किसी को दुःख ही देता है; अत मेरी इस दशा में भी अवश्य ही कुछ न कुछ रहस्य छिपा ही होगा क्योंकि वह तो समदर्शी और भक्त-भय-भंजन है, इससे मनुष्य को किसी भी दशा में उसे भूलना नहीं चाहिये!

चमक लाने के हित सोने को अग्नी में तपाता है।

खरा खोटा परखने को कसौटी पर कसाता है॥
नहीं उपकार कर सकता जो जगका जीव दाता है।
जो दुख में धैर्य रखता है, वही नर मान पाता है॥
छीना जिसने आनकर हरिश्चन्द्र का ताज।
उसने ही उनको दिया, अन्त स्वर्ग का राज॥

(अन्दर से गाने की आवाज आती है)

गाना —

सुमन सुवासित सननननननननी शीतल वहत समीर सखी।
मधुप हेत मालती मंजु पर लगी भ्रमर की भीर सखी॥ सु०-

सत्यवान—हैं! इस शांति साधन के सुरम्य वन में यह स्वर्गीय संगीत लहरी कहाँ से आ रही? जो मेरे अचल हृदय को चचल बना रही है। अहा! इस संगीत की सुन्दर गति से ऐसा भास हो रहा है, मानो मदन अपनी मनमोहनी मदमाती मनोहारिणी मृगनैनियों की सेना सहित इस सुन्दर वन में विहार करने के लिये इधरही आ रहा है —

वायू वसंत वह रही फूले कुसुम कानन में हैं।
फौज मानो मदन की उतरी हुई इस वन में है॥
कालि कोयल पड गई कोमल स्वरों के मान से।
मोह जाता है मेरा मन भी मनोहर तान से॥

हैं! आज यह सब क्या? है! यह संगीत लहरी तो सागर के वेग की तरह इधर ही बढ़ी आ रही है। हैं! यह तो अनेकों स्त्रियों का झुण्ड कल्लोल करता हुआ इसी ओर को आ रहा है! जरा छिपकर देखूँ तो, यह सब कौन हैं और इधर क्यों आई हैं?

(सत्यवान का लताओं की ओट में हो जाना सावित्री का सखियों के साथ में आना)

सखियाँ—

सुमन सुवासित सननननननन शीतल वहत समीर सखी।
मधुप हेत मालती मंजु परी लगी भ्रमर की भीर सखी॥
प्रीतम प्राण मिटै हैं आकर शीघ्र हिये की पीर सखी।
अवश खिलेगी हृदय कली अब काहे होत अधीर सखी॥
सुमन०—

सुमु०-सखी सावित्री! देखो, सुन्दर कुसुम कलिकायें अपने २ पेड़ों की पतली २ डालियों के पटरे पर पैंग मार २ कर कैसी खुशी से भूल रही हैं?

सुर-पर इन्हें इस समय इतनी सुधि ही कहाँ है, जो ये इनका आनन्द लेंगी? क्योंकि ये तो अपनी ही चिन्ता में भूल रही हैं।

सावित्री-तुम सब तो वड़ीही निर्लज्जा होगई हो,जबदेखो तब छेड़ती ही रहती हो,जब देखो तभी हँसा करती हो।

सुमु-(पेड की ओटमें खडे हुए सत्यवान को सावित्री की ओर देखते हुए देखकर सावित्री से) तो तुम रंज क्यों होती हो? तुम यही समझती हो, कि हम लोग निश्चिन्त हैं, मगर नहीं, हम तुमसे अधिक तुम्हारे देवता की खोज किया करती हैं। (सावित्री का मुँह अपने हाथों से सत्यवान की तरफ घुमाकर) लो, देखो! इधर देखो, बोलो, अबतो हँसती हो, या अब भी नहीं हँसती हो?

(सावित्री सत्यवान की चार आँखें होती हैं दोनों एक दूसरे को देख प्रेमसूत्र में बँध जाते हैं)

सुर—कहो, अब क्या सोचती हो?

सुसु—लाओ, अबतो इनाम देती हो ?

सावित्री—सखी——

सुरु—जी ! कहिये, अब क्या आज्ञा है ?

सावित्री—बहन—

सुरु—कहो भी तो !

सावित्री—इनका नाम तो......

सुरु | पूछ लूँ यही तो ?

सावित्री—हाँ !

सुरु—तो फिर इनाम मिलेगा न ?

सुसु-अवश्य नहीं तो अब भी कोई मीन मेप है क्या ?

ढूँढती फिरती थी बरसों से जिसे वह मिल गया
प्रेम के प्रगटे प्रभाकर फूल दिल का खिल गया।
गौतमके आशीर्वाद से अपना हुआ सब सिद्ध काम।
है अमित आनन्द छाया अब मिलेगा खूब इनाम ॥

सावित्री-भाई ! मैं तो तुम सभोंकी हँसी दिल्लगीसे घबड़ा गई हूँ, मैं क्या कह रही हूँ और तुम क्या कह रही हो ?

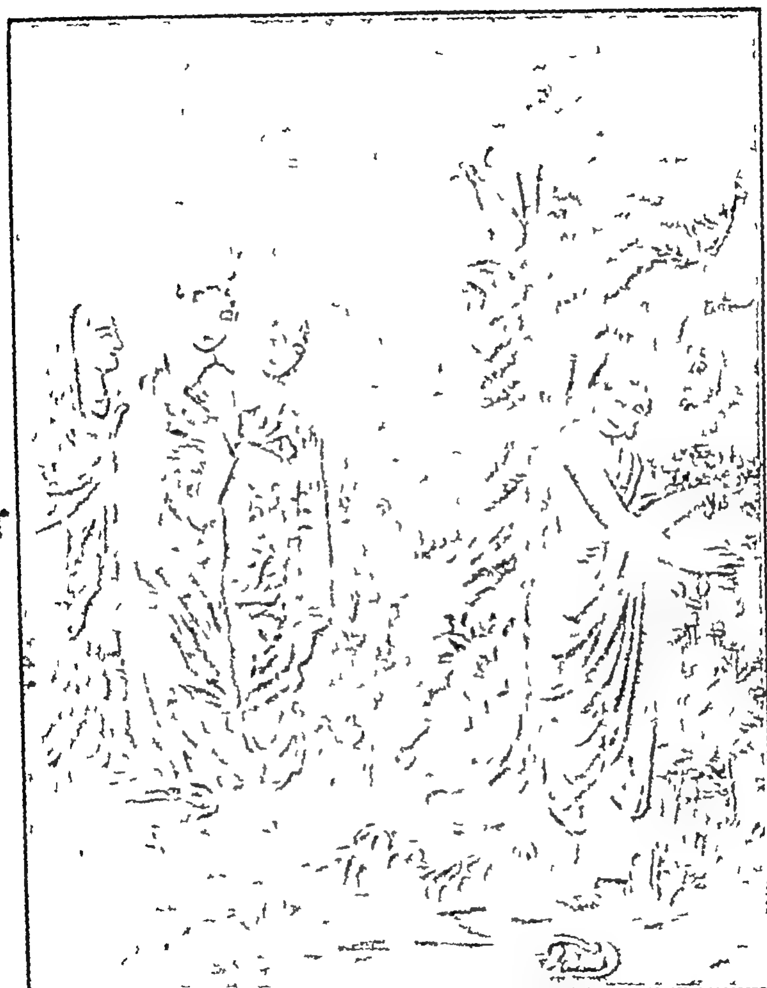
सुरु-हाँ ! तुम कह रही हो इस अजनबी पुरुष से बातें करने को और मैं लोक लाज के डर से ऐसा नहीं कर सकती हूँ?

सावित्री—क्या कहा ?

सुरु—यही कि, तुम्हीं न उनसे मिलकर बातें करलो और उस अनूप रूपको निहार, अपना जी अच्छी तरह भर लो।

बस नहीं रोके से तबीयत जब रुकी आई हुई।
किस लिये फिरहो खड़ी सिमटीसी सकुचाई हुई॥
पास जा प्रियप्राणसे मिलआओ दिलको खोलकर।
देख लो यह रत्न पहले हिय-तुला पर तौलकर ॥

सावित्री—सखि ! हाथ जोड़ती हूँ, अधिक न सताओ



सरूपा—पग नहीं रोके स नवियन जब रुकी आई हुई।
लिख लिये फिर हा नटी सिमटी सी सकुचाई हुई॥

सुमु०—तो फिर ईनाम लाओ।

सावित्री-(अपने गलेका हार उतारकर देती है) लो।

सुमु०—और मुझे ?

सावित्री-तुम भी लो (दूसरा हार उसे देती है)कहो, अब तो प्रसन्न हो ?

दोनों—हाँ।

सावित्री-तो फिर ?

सुरु—हाँ हाँ सुनो !

सावित्री—कहो !

सुरु—यही, कि यह महाराज द्युमत्सेन के प्रबल पराक्रमी पुत्र राजकुमार सत्यवान हैं !

सावित्री—चल हट,तू तो बड़ी ही नटखट है।

सुमु०-लो भला अभी मेरी सखी ने इतना समझाया है, पर फिर वही हँसी !

सावित्री-सखी !

—तो तुमको मेरी बातों का विश्वास नहीं होता है

सुमु०-विश्वास तो तब हो जब बातें विश्वास के योग्य करो, कहाँ वनों में विचरने वाला ऋषिकुमार, कहाँ कहती हो राजदुलार ? भला तुम्हीं कहो, यदि ये राजकुमार होते तो अपने राज्य कानन में विचरते वा इस वनमें मारे मारे फिरते?

सुरु—सखि ! तुम संसार चक्र से अनभिज्ञ हो, इसीसे ऐसा कहती हो। सुनो, इनके राज्य को इनके पुराने मंत्री ने राजकुमार सत्यवान की अनुपस्थिति में धोके से अपना लिया है और उसी चांडाल ने महाराज द्युमत्सेन जी को अन्धा कर दिया है, तभी से वृद्ध महाराज अपनी रानी सहित इसी वन में भगवान का ध्यान धरते हैं और राजकुमार दत्त-चित्त से अपने माता पिता की सेवा किया करते हैं —

इनके दुख सुखकी कहानी का यही विस्तार है।
जिसको समझा है ऋषि-बालक वो राजकुमार है॥

सुमु०—परन्तु, तूने इन बातों को कैसे जाना?

सुरु—महर्षि की कृपा से! उन्होंने मुझे इस उद्यान में इस समय सत्यवान के यहाँ रहने की खबर पाकर ही मुझे यहाँ पर आनेको आज्ञा दी थी, यह सारी कृपा उन्हीं ने की थी जो—

विश्व के उद्यान में ढूँढा जहाँ पाया बबूल।
आज गौतम की कृपासे मिल गया कांटों में फूल॥

सावित्री—तो फिर अब यही हमा...

दोनों—हमारे जीवन प्राण हैं, क्यों ठीक है न?

सावित्री-दुर पगली। (लज्जित हो जाती है) गाना—

सुमु०—लगी नहीं छिपै, करो लाखो यतन
सुरु०—प्राण प्रीतम पिया पै निसारो तन मन॥
सुमु०—खैर खून खाँसी खुशी, वेर प्रीत मधुपान।
नैना लागे ना छिपै, जाने सकल जहान॥
सुरु०—नैना लागे ना छिपै, करो अनेकन ओट।
चतुर नारि औ सूरमाँ करे लाग में चोट॥
सावित्री-सखी मोहे नहीं सताओ।
हटो जाओ न रार मचाओ॥
सुमुखि। मन मन्दिर में प्रेम की विटाव प्रतिमा।
सुरुचि। करो सुमन सो पूजन॥ लगी॥

(गाते २ सावित्री का सखियों के साथ प्रस्थान)

सत्य०-(लता कुञ्ज से प्रगट होकर) ह, यह सब कौन थीं क्या आकाश की परियाँ थीं, या अपनी सहेलियों सहित इन्द्र की इन्द्राणी सची आई थी? नहीं नहीं, इन दोनों में इतनी मन-मोहकता नहीं हो सकती है, तब, क्या ये मदन की मनोहा-

रिणी रति थी, जो अपनी सहेलियों के संग अपनी मधुर मुसकानसे मुनियों के मन को मोहने के लिये आई थी ? नहीं२ वह भी नहीं हो सकती है, कारण कि इसका मुख सौम्य था, सौन्दर्य शशि की स्वच्छ किरणोंसे शान्ति सुधा वर्षा रही थी, इसकी मुसकान में मेघ की ऐसी तीव्रता नहीं थी बल्कि वह माधुर्यता से मन्द मन्द हँस रही थी। सब तो था पर यह थी कौन ? कदाचित कमलादेवी ने तो देव बालाओ के साथ अपने प्रेमी भक्तों को दर्शन देने का कष्ट नहीं उठाया था, ? जो हो, पर यदि हो सकता है तो यह सौम्य-स्वरूप कमला सत शारदा और सावित्री के अतिरिक्त दूसरे का नहीं हो सकता है।

ऋषि कुमार—(आकर) हाँ सावित्री ही थी सावित्री !

सत्य०-कहो भाई परमानन्द ! तुम कैसे आ गये ?

पर०—तुम्हारा प्रेम नाटक देखने।

सत्य०-वह क्या ?

पर०—यही, कि अब तुम भी रमणीरत्न के नैन बान के आखेट हो रहे हो —

मन के भावों को मिलाना मन से मन, हो मन विमुग्ध।
तार दो दिल का हो एक दिल अब बजाना हिय विमुग्ध॥

सत्य०-यह तो तुम झूठा दोष दे रहे हो !

पर०-अपने मन से पूछ कर सत्य २ कहो कि कौन झूठा-

आराम कर सकते न आसानी से दिल के घाव को।
लाख कोशिश कर छिपा सकते नहीं तुम चाव को॥

सत्य०-भाई परमानन्द ! बात तो तुम ठीक कह रहे हो, प्रेम पाश के प्रबल बन्धनों में बँध गया, उस चतुर चोर ने मेरे देखते २ नूपुर की ध्वनि के साथ मेरी आँखों की खिड़कियों के

रास्ते से मेरे हृदय में प्रवेश करके, मेरे मनको लूट ले गया, और मैं मुँह ताकता ही रह गया !

वेधड़क चितचोर वह चित मे मेरे आया उतर ।
ले गया दिल को हमारे लूट, डंका पीट कर ॥
कर गया घायल मुझे मैं कुछ न उसका कर सका ।
कर मसलता रह गया कर भो न उसका धर सका ॥

पर—क्या करोगे ? प्रेम ऐसा होता ही है ! अत संतोष करो ! असन्तोष से प्रेम कर ! धैर्य्य न खोवो, चलो, आश्रमको चलो ।

सत्य—चलो ।

(दोनों का प्रस्थान)



अंक दूसरा—दृश्य तीसरा ।

स्थान—राजपथ ।

(नारद मुनिका नारायण के भजन मे मग्न होते हुए प्रवेश)

गाना ।

तोरी काया की नगरिया में माया बसी ।
माया बसी छाया मे धसी ॥ तो०—
मोहका ऊँचा महल बनाया सीढ़ी लोभ लगाया ।
ईर्षा के द्वारे से होकर छल के छत पर आया ॥
दया धरम का धन नहिं जोड़ा, पूंजी पाप कमाया ।
काल दण्ड ने डाका डाला तब काहे घबड़ाया ॥
काम नहीं आवे धन धरणी, संग जात है अपनी करनी ।
वैतरणी में मिली न तरणी—
सम्पति सगरी नसी ॥ तो०—

न्याय करन हित धर्म राजने सन्मुख जबै बुलाया।
चित्रगुप्त ने कर्म की पत्री पढ़कर तबै सुनाया॥
प्रश्न पाप का पूछन, लागे तब प्राणी चकराया।
दंड दिया जब चौरासी चक्कर का तब पछताया॥
कर गुप्त प्रगट दरशाया, तब कोई काम नहिं आया!
जब नर्क का हुकुम सुनाया, तब फंदे में जान फँसी॥तो०—

नारायण नारायण अहा! संसार का भी कैसा विलक्षण प्रभाव है! कि प्राणी यहाँ आते ही अपने आपको भूल जाता है मनुष्य माया की मोहनी मद में मतवाला होकर इस कर्म-भूमि को आनन्द-भूमि जानने लग जाता है! धर्मका ध्यान छोडकर अपने स्वार्थ के लिये पाप के पाश में बँध जाता है और फिर चौरासी का चक्कर लगाता है!

मोहनि माया सो मिलत, भूल जात सब ज्ञान।
जोतिर्मय हो जगत में, घूमत अन्ध समान॥
प्रथम लोभ के हो वशी चेतै नहिं नादान।
विपत पड़े पछताय के, सुमिरत है भगवान॥
दुख में सब हरि को भजे, सुख में भजे न कोय।
जो सुख में हरि को भजे, दुख काहे को होय॥

नारायण, नारायण, नारायण! जब कि देव यक्ष गन्धर्व और इन्द्र कुवेर इत्यादि तक इस माया मद और अहंकार के तावे हैं, तो फिर इसमें मनुष्यों ही का क्या दोष है। ये विचारे तो व्यर्थ ही मृत्युलोक का कष्ट सहते हैं! मैंने कई बार सोचा कि किसी युक्ति से इनका उपकार करूँ, पर कोई युक्ति सूझती ही नहीं है। भगवान से पूछता हूँ तो स्पष्ट ही कहते हैं, कि मनुष्य तो सहज ही में मेरे भजनों द्वारा भवसागर से उद्धार पा सकता है, पर यह तो माया ने अपना ऐसा जाल

फैलाया है, कि किसी को हरि सुमिरन का अवकाश ही नहीं है, तब, तब क्या जो उपकार करता हूँ वही करूँगा ! 'सुना है कि सावित्री सत्यवान को वरना चाहती है, और सत्यवान की आयु केवल एक वर्ष की है, अत चल कर उसी को समझाऊँ और एक बालिका को वैधव्य के दु खो से बचाऊँ, परोपकार जितना हो सके वही बहुत है ! नारायण, नारायण, नारायण।

गाना।

भजमन गोविन्द गोविन्द नाम।
माया जग की जग में रहती काम न दे धन ,धाम।
प्राण पकड के काल ले चला जलत चिता में चाम॥
कुटुम कबीला संग के साथी रोय करें विश्राम।
धर्म कर्म ही साथ जात है, गुप्त भजो श्री राम॥
(बीणा बजाते हुए नारद जी का प्रस्थान)



अंक दूसरा–दृश्य चौथा।

स्थान महाराज अश्वपति का दर्बार।

(महाराज अश्वपति सिंहासन पर उदास चितसे विराजमान हैं दरबारी गण बैठे हुए हैं सहेलियां नृत्य कर रही हैं)

गाना–छाया होवे निश दिन महराज पे करतार की।
बैरी रोवैं खा करके मार तलवार की॥ छाया० ॥
फूलें फलें महराज सदा ही ग्याती बढ़े दरबार की।
अचल रहें निस दिन नव कीरति उन्नति हो परवार की॥ छा०
(सहेलियों का नाचते गाते हुए प्रस्थान।)

अश्व—प्रधान जी! न जाने क्यों मेरा मन अब राज काज की ओर से खिचा सा रहता है, चित्त हर समय उदास सा बना रहता है —

मन मेरा लगता नहीं अब राज्य कारोबार में!
है नजर आता नहीं आनन्द अब संसार में!
झंझटों से विश्व के उकता गया है मेरा मन!
विश्वमें ऐसे हूं ज्यों कैदी हो कारागार में!
पड़ा रहता हूँ सावित्री बिना बेसुध मलिन्ता मे!
चितासे भी अधिकहै उष्णता इस चितकी चिन्तामे!

प्रधान-श्रीमान्! सत्य कहते हैं, वस्तुत चिन्ता की बड़ीही भयानक ज्वाला होती है, जो हृदय के अन्दर से उत्पन्न होकर अन्दर ही अन्दर सुलगने लगती है, और सारे शरीर को जला भस्म कर देती है .—

चिन्ता ज्वाल, शरीर-वन, दावा लगि २ जाय!
प्रगट धुआँ दीखे नहीं, उर अन्तर धुधुवाय॥
उर अन्तर धुधुवाय जरे ज्यों काँच की भट्टी!
लहू माँस जल जाय, जाय रहि हाड की ठट्टी॥
कह गिरधर कविराय रहे दिन रात मलिन्ता।।
जीने को खा जाय डंकिनी है यह चिन्ता॥

अश्व-हाँ! तभी तो चिता से चिन्ता में एक बिन्दु का विशेषण है, वास्तव में चिन्ता ऐसी ही भयानक वस्तु है।

प्रधान—सत्य है पर संसारी जीवों को इससे मुक्ति भी तो नहीं मिल सकती! क्योंकि यह पंचतत्त्व की काया माया मिश्रित है, और माया मोह उत्पन्न करती है, फिर ममता, माया, मोह, लोभ यही तो चिन्ता के मुख्य कारण हैं। फिर भला इस विश्व रूपी मायापुरी में रहने वाला चिन्ता से कैसे

बच सकता है ! धनी, मानी, ज्ञानी, गरीब, दुखी सुखी राजा, फ़कीर, पुजारी, योगी और भिखारी-सभी इसके शिकार हैं, अत. आपका चिन्ता करना हीं नि स्सार है।

गृहस्थ सदा अपनि गृहस्थी के लिये चिन्तित है।
नृप निज राज बढ़ाने के लिये चिन्तित है॥
गरीब धन को कमाने के लिये चिन्तित है।
साधू भगवान को पाने के लिये चिन्तित है॥
यहाँ तक कि जो है विश्व बाग का माली।
हृदय उसका भी इस चिन्ता से नहीं है खाली॥

इसालिये निवेदन है,कि मेरी प्रार्थना पर ध्यान दीजियेऔर सर्व-नाशिनी चिन्ता को चित्त में दबा देने की चेष्टा कीजिये।

अश्व—मैं भी ऐसाही चाहता हूँ,चाहता ही नही चेष्टा भी करता हूँ, परन्तु मेरी चेष्टा दबो जाती है और चिन्ता अपनी प्रबलता से और भी अधिक सताती है। देखिये न, आज सावित्रीको गये कितने दिन बीत गये ? पर अभी तक मनोरथ सिद्ध न हुए। भला आपही बताइये, कि जिस पिता के घरमें विवाहने योग्य-तरुणतनया हो, वह चिन्ता से रहित कैसे हो सकता ?

(राजपुरोहित का प्रवेश)

पुरोहित—ईश्वर की करुणा और कृपा से !

अश्व-कौन, पुरोहित जी, ! भगवन् प्रणाम !

पुरोहित—श्रीमान् हो, नरेन्द्र ! प्रसन्न रहो और कीर्ति अचल रहे।

अश्व-कहिये ! आप लोग सफल मनोरथ हुए ? मेरी सावित्री के लिये कोई योग्य वर मिला ? कहिये वह कहाँ है ? किस अवस्था में है, सकुशल तो है ?

पुरोहित-सब कुशल है। ईश्वर की कृपा और सावित्री के भाग्य से, उसे उसके अनुरूप ही वर मिल गया है और वह सेना सहित प्रसन्न चित्त आ रहीं है। मैं आपको यह आनन्द समाचार सुनानेही के लिये उन लोगोंसे पहले चला आया हूँ।

वर वो ऐसा है धरा पर, ज्यों गगन पर चन्द है।
छोड़िये चिन्ता को बस आनन्द ही आनन्द है॥

अश्व-तब तो ईश्वर को धन्यवाद है! पुरोहितजी! आपने आज मुझे ऐसा अमूल्य आनन्द सम्वाद सुनाया है, कि जिसके निछावर में विश्व की सारी समृद्धि भी तुच्छ है, अतः मैं आपको देही क्या सकता हूँ? तोभी लीजिये यह मेरी तुच्छ भेट स्वीकार कीजिये और जिससे दोनों वर-वधू चिरकाल तक प्रसन्न रहें—ऐसा आशीर्वाद दीजिये।

(अपने गलेका कंठा उतारकर देते हैं, पुरोहितजी उसे सादर ग्रहण करते हैं)

पुरोहित—धन्य है नरेन्द्र! आपकी दानशीलता को धन्य है! वस्तुत आप देवलोक के भगवान शंकर की भाँति ही संसार में उदार हैं। नारायण आपका कुशल करेंगे और आपके पुण्य-प्रसाद से सावित्री अपने पतिदेव के प्रेम में रत रहती हुई आनन्द से जीवन क्षेप करेगी।

विमल विश्व की धार में अचल कीर्ति हो जाय।
यह वर वधु की जोड़ी जुगल कमल सदृश हर्षाय॥

(नारद मुनि वीणा के सुन्दर स्वरों से ईश कीर्तन की सङ्गीत-लहरी का प्रवाह प्रवाहित करते हुए प्रवेश करते हैं)

गाना।

नार०-भज गोविन्द गोविन्द माधव माधव मोहन कृष्ण मुरारे।

राम रमापति श्री नारायण सृष्टि के सिरजन हारे॥
गावत गावत गुण गोविन्द को शेष शंकर हारे।
गुप्त भजो भगवान को भक्तों निसदिन साँझ सकारे॥

(सब लोग नारद भगवान को देखते ही खड़े हो जाते हैं और प्रणाम करते हैं। नारद सबको हाथ उठाकर आशीर्वाद देते हैं)

अश्व—भगवन्! सेवक का प्रणाम स्वीकार हो!

नारद—आनन्दित हो, कुसंगति और कुकर्म से दूर रहो, धर्मात्मा हो फूलो फलो। नारायण, नारायण, नारायण।

अश्व—विराजिये महाराज! [नारद ऊँचे आसन पर महाराज की दाहिनी ओर बैठते हैं।] कहिये, आज किधर से आना हुआ? जो सेवक को अपने दर्शनों से सन्तुष्ट किया।

नारद-नारायण, नारायण, राजन्! तुम तो जानते ही हो कि मैं सदैव भ्रमणही किया करता हूँ,एक स्थान पर स्थिर तो रहता ही नहीं, जो बताऊँ कि कहाँ से आ रहा हूँ? हाँ! कई दिन हुए, कि मैं आकाश मार्ग से महर्षि गौतम के तपोभूमि की ओर से जा रहा था, तो मैंने तुम्हारी कन्या सावित्री को सत्यवान की ओर एक टक लगाये देखते हुए देखा था,तभी मैं विचारा था कि आपसे मिलकर कुछ कहूँ, सो आज इधर से आ निकला इसलिये यहाँ भी चला आया। नारायण,नारायण, नारायण [बाहर बाजे का शब्द होता है] हें! यह बाजा कैसा बज रहा है, क्या आज कोई उत्सव है?

चोब-[आकर] नरेन्द्र की जय जयकार हो, राजकुमारी सावित्री जी पधारी हैं।

अश्वपति-[चोबदार से] जाओ! सावित्री से कहो कि वह प्रथम महल में न जाकर यहाँ ही आयें, और पहले भगवान नारद जी का आशीर्वाद ले जायें।

चोबदार—जो आज्ञा। [जाकर]

सावित्री—[आकर] पिताजी प्रणाम करती हूँ।

अश्व०-प्रसन्न रहो पुत्री! देखो भगवान् नारदजी महाराज विराजे हैं आपको प्रणाम करके आशीर्वाद लो!

सावित्री—[नारदजी को देखकर] भगवन्! दासी श्रद्धा सहित श्री चरणों मे प्रणाम करती है?

नारद-प्रसन्न रहो सौभाग्य. .व...ती . (नारद आशीर्वाद देते २ चुप हो जाते हैं)

अश्व०-हैं महाराज, आप आशीर्वाद देते २ क्यों रुक गये? क्या इसके सौभाग्यवती रहने में कोई अड़चन है, जो आप ठिठक गये? कहिये २ देव! मुझसे स्पष्ट कहिये कि क्या कारण है और किस हेतु यह मौन धारण है?

नारद—नारायण, नारायण, नारायण, राजन्! मैं इसी निमित्त आया हूँ और साफ २ कहता हूँ, कि जिस सत्यवान से सावित्री प्रेम करती है–उसके साथ विवाह न होना चाहिये।

अश्व०-क्यों भगवन्! क्या उसका जाति वंश उत्तम नहीं है, या उसके आचरण ठीक नहीं हैं, या वह इसके अनुकूल नहीं है?

नारद—है, वह सब भाँति से सावित्री के अनुकूल है। महाराज द्युमत्सेन जी का वंश तो आपसे छिपाही नहीं है? वह सर्वाङ्ग सुन्दर, सर्वगुण पूर्ण और सच्चरित्र सत्यवान उन्हीं का पुत्र है! जो पितृसेवार्थ आज कल महर्षि गौतम के तपोभूमि में निवास करता है, अत उसमें दोष कुछ नहीं है!

अश्व०-फिर वह निर्धन है? इसी कारण आप इस विवाह को रोकना चाहते हैं?

नारद-नही यहाँ धनिक और निर्धन का सवाल नहीं है, क्योंकि सच्चा धन तो धर्म ही है, जो उस राजर्षि पुत्र सत्यवान मे वहुत ही अधिक है,। यह-चंचल-धन तो —

इस धरा का धन धरा में ही धरा रह जायगा।
धन है सच्चा धर्म जो की अन्त मे काम आयगा॥

अश्व०-फिर क्या कारण है कि आप मुझे इस सम्बन्धसे मना कर रहे हैं? इस सम्बन्ध मे कल्याण नहीं है-यह क्यों कह रहे हैं?

नारद—इस लिये, कि उसकी आयु मे अब केवल एक वर्ष और शेष रह गया है. अत वह एक वर्ष बाद महाकाल का शिकार बन जायगा और इस लोक को छोड़कर चला जायगा! इससे मेरी राय है कि सावित्री अपने लिये किसी अन्य वरको चुनले और सत्यवान से सम्बन्ध जोड़कर अनायास ही वैधव्य का दु ख न सहे। नारायण, नारायण, नारायण।

(सावित्री इस वज्रपात की चोट से तिलमिला कर मस्तक झुकाने लगती है)

अश्व०[दुखित होकर] बेटी! सुन रही है? देवर्षि भगवान नारद क्या कह रहे हैं?

सावित्री [लज्जासे] हाँ! सुन रही हूँ, अपने भविष्य का भयंकर नाद सुन रही हूँ। परन्तु. ...

अश्व०-परन्तु क्या?

सावित्री-यही कि मै स्त्री जाति हूँ!

अश्व०-फिर?

सावित्री-फिर जैसे धनुष से निकला हुआ तीर लौट कर नहीं आ सकता है, दिया हुआ दान लौटाया नहीं जा सकता है-वैसे ही एक आर्य धर्म वाली कुआँरी कन्या का हृदय. .

पृ० सं० ६९



सावित्री—दूसरे पति को चुने नारी तो यह दुष्कर्म है।
अब उन्हीं का चरण पूजूं यह हमारा धर्म है॥

अश्व-नहीं फिर सकता है इसे मैं भी समझता हूँ, परन्तु जैसे जान बूझकर आग में नहीं कूदा जाता है, वैसे ही यह भविष्य-गाथा सुनकर मुझसे भी इस विवाह की आज्ञा नहीं दी जाती है !

सावित्री-पिताजी ! यह आप क्या कह रहे हैं? मुझे बोलना नहीं चाहिये, पर क्या करूँ ? धर्म को जाता देख कर चुप भी नहीं रहा जाता है, अत कहना पड़ता है, धर्म को बचाने के लिये आग में भी कूदना ही पड़ता है। जो धर्मवान हैं वह अनेकों विपत्तियों को धर्म के हेतु शांति से सहते हैं और आह भी नहीं करते हैं। सुनिये ! जैसे काष्ठ की हाँड़ी आँच पर एक ही बार चढ़ती है, कदली फल एक ही बार फलता है, पुरुष का वचन एक ही बार निकलता है, वैसे ही कन्या के लिये वर एक ही चुना जाता है ! इससे अब चाहे मेरा भविष्य बने या बिगड़े, पर अब मेरा हृदय दूसरे को अर्पण नहीं किया जा सकता है।.असम्भव है !

दूसरे पति को चुने नारी तो वह दुष्कर्म है।
अब उन्हीं का चर्ण पूजूँ यह हमारा धर्म है॥

अश्व—परन्तु अभी तो तेरा विवाह नहीं हुआ है ?

सावित्री-किन्तु आपकी आज्ञा प्राप्त करने पर मेरे हृदयसे न्हीं को पति बनाने का संकल्प तो हो चुका है ?

अश्व-नहीं नहीं सावित्री? जिद्द न कर ! मेरा कहा मानजा

सावित्री-प्रण न टूटेगा चाहे प्राण जाय, ध्यान न टूटेगा, ऐ सब छूट जाय।

अश्व—विचार ले, दुःख सहेगी !

सावित्री-नहीं, मेरा पतिव्रत-प्रेम और सतीत्वशक्ति मेरी रक्षा करेगी। मेरा अटल धर्म, पति-भक्ति रक्षा करेगी।

अश्व-मैं तुझे अपने हाथों से आगमें नहीं झोंक सकता हूँ?

सावित्री-तो फिर आप धर्म को ही कैसे छोड सकते हैं?

अश्व-सावित्री! जहाँ तक तिलक वा और कोई वरन की विधि नहीं हुई है, वहाँ तक धर्म कैसे बिगड सकता है?

सावित्री-धर्म की गति बडी ही सूक्ष्म है! आडम्बर और सत्य-धर्म में बडा ही अन्तर है! वरवरन आडम्बर से नहीं हृदय से होता है और हृदयसे किया हुआ संकल्प अटल रहता है! अस्तु मैंने जो संकल्प किया है, वह टल नहीं सकता है!

पडे लाखों विपत तो भी न पग पीछे हटाऊँगी।
किया है मन से जो संकल्प मैं उसको निभाऊँगी॥
वही प्राणेश मेरे हैं उन्हीं को शिर झुकाऊँगी।
बजाकर हृदय की तन्त्री उन्हीं का गान गाऊँगी॥
हैं वही ईश्वर मेरे तन मन सब उन पर वार है।
धर्म, धन सर्वस्व हैं वह, वही मम संसार है॥

अश्व-समझाइये, देवर्षिजी! अब आपही इसे समझाइये और मेरी नाव को इस दुख-सागर से पार लगाइये।

नारद—नारायण, नारायण, नारायण, भला मैं इसे क्या समझाऊँगा? जब यह अपने नारी धर्म पर अटल है, तो मैं उसे धर्मपथ से हटाकर पाप क्यों कमाऊँगा? महाराज! मेरी राय में तो अब आप इसके मनोनुकूल ही इसका विवाह रचाइये, शङ्का न लाइये। यदि यह धर्म पर अटल है, तो मैं अपनी पूर्ण शक्ति से कोशिश करके इसकी डूबती नौका को बचाने में अपना समय लगाऊँगा। आगे दैव इच्छा, किन्तु मुझे विश्वास है कि—

भक्त वत्सल धर्म रक्षक धर्म के हित जायँगे।
सती के सत्-धर्म को लज्जा को आन वचायँगे॥
धर्म के रक्षक कहाकर धर्म को न डुबायँगे।
दीन वन्धू दीन जनका दुःख दूर हटायँगे।
अन्याय हो सकता नहीं है न्याय के दर्बार में॥
सत्-कीर्ती होगी अटल इस सती की संसार में।

अश्व०-यदि आपकी भी यही राय है, तो मैं तैयार हूँ।

नारद-परन्तु सुनिये, विवाह इस रीति से हो, कि महाराज द्युमत्सेन जी को कष्ट न हो! क्योंकि अब वह राजा नहीं बल्कि राजर्षि हैं। अत आप कन्या को वहीं लेकर चले जाइयेगा और उस पवित्र-भूमि में कन्यादान का फल प्राप्त कर, अक्षय यश पाइयेगा।

कन्या दो आनन्द से, त्यागो सोच विचार।
चिन्ता मन धरिये नहीं, रक्षक हैं करतार॥

[सावित्री नारद को प्रणाम करती है, वह आशीर्वाद देते हैं]

——*——

अंक दूसरा—दृश्य पाँचवाँ ।



स्थान—साधारण कमरा ।

[इन्दुमती का अपनी जवानी के जोश में गाते हुए प्रवेश]

इन्दु—

गाना ।

मोरी वाली उमर मतवाली निराली नई नवेली हूँ नारी ।
गोरे गालोंपे लाली निराली छवी छाई नागिनसी लटकारी ॥
भौंह की काट कटार सी जहर बुझी तलवार ।
कजरारे कारे नयन मद सों भरे रतनार ॥
डाली साँचे में मानों दो नाली बन्दूक ।
सैन की गोली चला करती है वार अचूक ॥
पटे घायल हजारों सिसकते रहा ।
वो है आली निराली मतवाली अदा ॥

मैं तो चंचल चपल अलबेली छबीली रसीली हूँ मतवारी ॥

हायरी जवानी ! तूने तो मुझे दीवानी बना दिया है ! मुझ कामिनी की कोमल कुसुमलता में यौवन के फूल क्या फूले हैं—हृदय पर पत्थर सा रख दिया है । एक तो मुझसे पूरा अपने अंग का बोझ नहीं सहा जाता था, दूसरे अब यौवन के भार से मैं और भी लाचार हो रही हूँ ! तिस पर ये मर-दुये मनचले आदमियों ने तो और भी नाकों दम कर रक्खा है, घर से बाहर निकलना ही बन्द कर दिया है । सैना नचाने

जाओ, मन्दिरों में दर्शन करने जाओ, पुण्य स्थानों में कथा सुनने जाओ या तीर्थ करने जाओ-सभी जगह इन बगुला-भक्तों की भरमार रहती है। सर पर ढाई हाथ की चुटियाँ, गले में रुद्राक्ष वा तुलसी की माला, मस्तक पर चंदन तिलक तन पर रेशम का वस्त्र धारे, हाथ में सुमिरनी और हृदय में कतरनी लिये ये अवारे-सभी जगह पर मिलते हैं। "भेष संत के और काले अन्त के' मरदुये ऐसे पीछे पड़ जाते हैं-जैसे माधवी लता के पीछे लोभी भौंरे।

झक्की-(आकर) तब तो ले लपक्के, कहिये श्रीमती जी किसे कोस रही हैं? किसके लिये मसोस रही हैं?

इन्दु-अपनी जवानी को, जिसने दीवानी बना रक्खा है।

झक्की-क्यों, क्यों आखिर इसने आपका क्या बिगाड़ा है?

इन्दु-अरे पगले, इसी ने तो मुझे सता रक्खा है?

झक्की-(ताज्जुब से) सता रक्खा है!

इन्दु—हाँ, मेरा तो घर से बाहर निकलना भी मुशकिल होगया है! जिधर जाती हूँ,उधर ही लोग अपना सोना पीटने लगते हैं। कोई कहता है,हाय जानी! कोई कहता है,वाह मेरी जान, कोई कहता है मेरी प्यारी मैं तो मर गया, यानी जहाँ जाती हूँ वहाँ ऐसी ही कौवों की कायँ कायँ सुन कर घबड़ा जाती हूँ और अपनी जवानी को कोसती हुई लौट आती हूँ।

झक्की-तब तो ले लपक्के! बस अब क्या है,अब तो हमारे सेट साहब का भाग्य खूब चमका है!

इन्दु—दुर मुये, यह तू क्या बकता है?

झक्की—बिगड़िये नहीं सरकार! बन्दा झूठ नहीं बकता है बेकार, बल्कि सोलहो आना, पावरत्ती ठीक कहता है,क्यों ठीक है न?

इन्दु—अरे मुये तू तो अपनी बकता जाता है, बोल ठीक के पुतले ! क्या ठीक सुनाता है ?

झक्की—सुनियेगा ? अच्छा, तो सुनिये !

इन्दु—कह क्या कहना है ?

झक्की—यही कि अब तो चारों ओर आनन्दही आनन्द है, बस, बढा हाथ और ले लपक्के !

इन्दु—अरे अक़िल के अन्धे, कुछ कहेगा भी या योंही कान खायेगा, कौवे की तरह कायँ २ चिल्लायगा ?

झक्की—अच्छा, तो फिर सच सच सुना दूँ ?

इन्दु—सुना।

झक्की—पर बिगड़ियेगा तो नहीं ?

इन्दु—नहीं, नहीं बिगड़ूँगी ! पर सच २ कहना, झूठ बोला तो फिर (थप्पड़ दिखा कर) याद रखना !

झक्की—नहीं, भला मैंने कभी भी झूठ कहा है ? जो आज झूठ बोलूँगा (पबलिक से) क्यों, ठीक है ना ? ले लपक्के !

इन्दु—बोल, बोलता है कि लाऊँ डण्डा।

झक्की—बस, अब हो गया ठण्डा, अच्छा तो फिर खूब आनन्द मनाइये, कुछ इनाम लाइये और खुशखबरी सुनाने के उपलक्ष में, मेरा मुँह मीठा कराइये, क्यों ठीक है न ?

इन्दु—अरे मुये, कुछ कहेगा भी या योंही माथा फिरायेगा?

झक्की—सुनियेगा २, जरूर सुनियेगा, बड़ी खुशी की बात सुनाऊँगा, मगर बन्दा ना उस बातको तब जिह्वापर लायेगा—जब कुछ इनाम पायेगा, क्यों ठीक है ना ?

इन्दु—कह भी तो क्या है ? कि पहले ही इनाम लेगा ?

झक्की—तो इनाम मिलेगा ? (पबलिक से) तब तो सुना देता हूँ भाई ! क्योंकि इनाम की चाह है हर दिल में समाई।

इन्दु—अच्छा बता क्या खबर है ?

झक्की—आपके विवाह की,'क्यों, है न खुशी की बात ? बस, अब तो लपक्के !

इन्दु-(पीठ पर मारकर) चल मुये (लज्जित होती है)

झक्की-वाह ! ऐसी अच्छी बात कहने का ऐसा ईनाम ?

इन्दु-जा जा, बातें न बना !

झक्की—अजी ! मैं बातें नहीं बनाता हूँ, सुनो और भी सुनाता हूँ ! दिल खुश हो-ऐसी बात बताता हूँ।

इन्दु-क्या कहता है कह भी ?

झक्की-यही कि दूल्हा भी वह मिला है, कि दुनियाँ में जिसकी जोड़ी नहीं, ऐसा बाँका, ऐसा तिरछा, ऐसा रसीला और ऐसा सजीला, कि बस देखतेही बनता है,जो उसकी ओर देखता है-ताकता ही रह जाता है, अजी ! यह बड़े भाग्य की बात है कि आपका सम्बन्ध उससे जुड़ गया है, फिर हमारे सेठजी ने दहेज भी तो अधिक तय किया है, क्यों ठीक है न ? बस अब तो टन्न टन्न महादेव है। ले लपक्के !

लोभ-(प्रवेश करते ही) मिल जायगा !

झक्की—मिल जायगा, हैं ! अब भी मिल जायगा ? अजी सेठ साहब आप यह मिल जायगा २ क्यों कह रहे हैं ? अजी अब तो मिल गया २ कहें, अरे अब तो खुशी हो रहें ?

लोभ-हाँ मिल तो गया पर-

झक्की-पर क्या ?

लोभ-कमती मिला, पर वह अपनी ही भूल हुई ! यदि मैं और माँगता. तो और भी ज्यादा मिलता।

झक्की-तो फिर अब बदल जाइये,उसमें बातही कौनसी है? यह न ठीक हो तो किसी और को फँसाइये !

इन्दु–अरे मुये तू तो अपनी बकता जाता है, बोल ठीक के पुतले ! क्या ठीक सुनाता है ?

झक्की—सुनियेगा ? अच्छा, तो सुनिये !

इन्दु—कह क्या कहता है ?

झक्की—यही कि अब तो चारों ओर आनन्दही आनन्द है, बस, बढ़ा हाथ और ले लपक्के !

इन्दु—अरे अक़िल के अन्धे, कुछ कहेगा भी या योंही कान खायेगा, कौवे की तरह कायँ २ चिल्लायगा ?

झक्की—अच्छा, तो फिर सच सच सुना दूँ ?

इन्दु—सुना ।

झक्की—पर बिगड़ियेगा तो नहीं ?

इन्दु–नहीं, नहीं बिगड़ूँगी ! पर सच २ कहना, झूठ बोला तो फिर (थप्पड़ दिखा कर) याद रखना !

झक्की—नहीं, भला मैंने कभी भी झूठ कहा है ? जो आज झूठ बोलूँगा (पबलिक से) क्यों, ठीक है ना ? ले लपक्के !

इन्दु—बोल, बोलता है कि लाऊँ डण्डा ।

झक्की—बस, अब हो गया ठण्डा, अच्छा तो फिर खूब आनन्द मनाइये, कुछ ईनाम लाइये और खुशखबरी सुनाने के उपलक्ष में, मेरा मुँह मीठा कराइये, क्यों ठीक है न ?

इन्दु–अरे मुये, कुछ कहेगा भी या योंही माथा फिरायेगा?

झक्की—सुनियेगा २, जरूर सुनियेगा, बडी खुशी की बात सुनाऊँगा, मगर बन्दा तो उस बातको तब जिह्वापर लायेगा-जब कुछ ईनाम पायेगा, क्यों ठीक है ना ?

इन्दु–कह भी तो क्या है ? कि पहले ही ईनाम लेगा ?

झक्की–तो ईनाम मिलेगा ? (पबलिक से) तब तो सुना देता हूँ भाई ! क्योंकि ईनाम की चाह है हर दिल में समाई ।

इन्दु—अच्छा बता क्या खबर है ?

झक्की—आपके विवाह की, क्यों, है न खुशी की बात ! बस, अब तो लपक्के !

इन्दु- (पीठ पर मारकर) चल मुये (लज्जित होती है)

झक्की-वाह ! ऐसी अच्छी बात कहने का ऐसा ईनाम ?

इन्दु-जा जा, बातें न बना !

झक्की—अजी ! मैं बातें नहीं बनाता हूं, सुनो और भी सुनाता हूं ! दिल खुश हो-ऐसी बात बताता हूं।

इन्दु-क्या कहता है कह भी ?

झक्की-यही कि दूल्हा भी वह मिला है, कि दुनियां में जिसकी जोड़ी नहीं, ऐसा बांका, ऐसा तिरछा, ऐसा रसीला और ऐसा सजीला, कि बस देखनेही बनता है, जो उसकी ओर देखता है-ताकता ही रह जाता है, अजी ! यहा बड़े भाग्य की बात है कि आपका सम्बन्ध उससे जुड़ गया है, फिर हमारे सेठजी ने दहेज भी तो अधिक तय किया है, क्यों ठीक है न ? बस अब तो टन्न टन्न महादेव है। ले लपक्के !

लोभ-(प्रवेश करते ही) मिल जायगा !

झक्की—मिल जायगा, हैं ! अब भी मिल जायगा ? अजी सेठ साहब आप यह मिल जायगा २ क्यों कह रहे हैं ? अजी अब तो मिल गया २ कहें, अरे अब तो खुशी हो रहें ?

लोभ-हां मिल तो गया पर-

झक्की-पर क्या ?

लोभ-कमती मिला, पर वह अपनी ही भूल हुई ! यदि मैं और मांगता, तो और भी ज्यादा मिलता।

झक्की-तो फिर अब बदल जाइये, उसमें बातही कौनसी है? यह न ठीक हो तो किसी और को फँसाइये !

लोभ-हाँ! ऐसा तो जरूर करता, बदल तो अवश्य जाता, पर उसने मुझे रुपया देकर रसीद भी तो लिखवा लिया है?

झक्की-तब फिर क्या, अपने माथा को कोसिये, मनही मन में मसोसिये और चुप रहिये, क्यों ठीक है न?

इन्दु-पर इतने शोककी बात क्या है, तनिक मैं भी तो सुनूँ?

झक्की-शोक की बात क्यों नहीं है? तुम जैसी सुमुखी, सजीली, अलबेली, रसीली, नोकीली, चटकीली, छबीली की कीमत आपने केवल बीस हजारही ली है! आपही बताइये कि इन्हों ने भाव ताव करने में कितनी जल्दी और भूल की है?

जल्दी न करके कुछ दिन जो और ठहर जाते।
तो बीस के बदले में पच्चीस अवश पाते॥
पर क्या करें तकदीर ने कुछ दी न गवाही।
बेचा अपूर्व रत्न मिटी भी न तबाही॥

(दर्शकों से) क्यों ठीक हैं न? क्योंकि—

सर पीटता है हाय! हाय!! बाप बेचारा।
ख्वाहिश ने जल्दी कर यह काम बिगारा॥

इन्दु-अरे मुये, यह तू क्या कह रहा है? क्या पिताजी ने मुझे बीस हजार पर बेच डाला है?

लोभ—हाँ, अपनी भूल हो गई! नहीं तो एक लाख से कम कभी न लेता, पर बेटी! घबड़ा नहीं! तेरा वर भी ऐसा है कि उसकी सेवा और उसका प्रेम देखकर तू भी प्रसन्न हो जायगी। घबड़ा नहीं! उसकी करोड़ों की सम्पत्ति शीघ्र ही, अपने आप मेरे हाथ आयेगी, मुझे धनी बनायेगी?

झक्की-तब तो ले लपक्के ! हाँ साहब ! आपके पति का क्या कहना है, वह तो परलोक का यात्री ठहरा, जभी कूँच कर दे तभी, अरे आज नहीं मरा तो कल मरेहीगा, और तब मेरे सेठजी का घर तो करोड़ासे भरेगाही, क्यों ठीक है न ?

इन्दु—तो क्या, मैं उसी बुड्ढे के गले में मढ़ी जाऊँगी ? हाय राम ! क्या मैं यों ही दु खमय जीवन बिताऊँगी ?

लोभ-घबड़ा नहीं बेटी ! वह बुड्ढा है, तो उसमें हर्ज ही क्या है ? अरे बुड्ढा बालम तो और भी अच्छा है ? कारण कि वह जवानों की तरह से बात २ में त्यौरी नहीं सकता है ताब नही दिखा सकता है। और वह तो उल्टा ही तुझे चाहेगा ? तेरी सेवा करेगा, तुझे पंखा झलेगा, तेरा पाँव दबायेगा, तू जिस तरह चाहेगी, वह तेरे इशारे पर चलेगा।

झक्की-और भी बहुत सी बातें हैं, दूसरे वह सुन्दरता में भी कम नहीं है, हाथ पांव ऐसे हैं जैसे सन की लकड़ी, कमर ऐसी है, जैसी टूटी हुई कमान, पीठ से सटा हुआ पेट खाली, गला ऐसा है, जैसे टूटी हुई हड्डी, मुँह ऐसा है, जैसे फटी हुई फावड़ी, गाल ऐसा है जैसे चुचुका हुआ बैंगन और नाक ऐसी है, जैसे बन्दूक दोनाली, आंख ऐसी है जैसे इमली का खोखला और सर कद्दू सा सफेद और गोला है। बस ठीक वह ऐसाही सुन्दर है, पर उसका पैसा मनहर है ! क्यों ठीक है न ?

इन्दु-हा राम ! तब तो मैं मर गई (बेहोश होकर गिर पड़ती है)

लोभ-अरे यह क्या हुआ ? हाय !' अब क्या करूँ ?

झक्की-बस ले लपक्के !

देखो निज करनी का हाल !
और खाव कन्या का माल ॥

लोभ में पड़ कर किया हलाल।
कन्या बेच बने चाण्डाल॥

लोभ-अरेरेरे!! अब मैं क्या करूँ? (उसकी नाड़ी देखता है अरे, उठरे मेरी इन्दो! उठ देख तेरा बाप तेरे लिये कितना दुःखी हो रहा है? हाय यह तो उठती ही नहीं, अब क्या करूँ?

झक्की-करोगे क्या? अपनी किस्मत पर रोवो (पबलिक से) क्यों ठीक है ना (रोता है) ऊँ ऊँ ऊँ।

(सेठ लम्पट रामजी का दूल्हा बने हुए प्रवेश)

लम्पट-बस अब आनन्द ही आनन्द है! पक्की पकाई खाऊँगा, बिछी बिछाई सेज पर सोकर आनन्द से पैर फैलाऊँगा अपनी। (इधर वो जोर २ से रोते हैं? लम्पट सब सुनकर) अरे! तुम सब रोते क्यों हो? आनन्द मनाओ, आनन्द मनाओ आज तुम्हारे घर विवाह है और तुम रोते हो? हाँ! गाओ २ मंगल गीत गाओ—

गाना।

मैं तो बाँका तिरछा दूल्हा बना हूँ, गाओ मंगलचार।
मुझे बाँकी छबीली दुल्हन मिलेगी आयेगी अब तो बहार॥
(वह सब और जोर २ से रोते हैं)

लोभ—हायरे, हाय! मेरी बोलती मैना, सोने के पिंजड़े की तिल्ली तोड़ कर उड़ गई! अरे बाप रे बाप! अब मैं क्या करूँ राम! धीरज क्यों धरूँ राम?

झक्की—बस ले लपक्के! अब रोते क्यों हो? अरे सेठजी कन्या बेचके धन कमाब, धन (पबलिक से) क्यों ठीक है न?

इन्दु-(धीरे धीरे होश में आती है) बचाव बचाव, मुझे इस बुड्ढे भूत से बचाव, हाय ! अब मैं क्या करूँ ? मेरा सुख और सुहाग की चोली मृत्यु के दामन से मिल गयी !

लोभ—बच गई !! बेटी मरने से बच गई !!!

झक्की-तब तो ले लपक्के !

इन्दु-हाय ! अब तो मुझे इस बूढे पति के साथ कुढ २ कर मरना पड़ेगा ? तब, तब आज ही मर जाना ठीक है !

देख लो कन्या का जीवन पिता का व्यवहार भी।
परिणाम कन्या बेचने का देखले संसार भी॥

(अपने गले में आँचल की फाँसी लगाती है)

लोभ-अरे रे रे ! यह क्या करती है ? ठहर ठहर (लोभराम उसे धरना चाहता है, वह उसे झपट कर फाँसी लगा लेती है और गिर कर मर जाती है) हाय मेरी बेटी !

लम्पट-हाय मेरी नई नवेली दूल्हन !

झक्की-हाय रे बूढे का ब्याह ! ऊँ ऊँ ऊँ ऊँ ऊँ।

लोभ-हाय ! मर गई (रोता है)

झक्की-तुम्हारी करणी से !

लोभ-नहीं, इस बूढे के कारण (जोर से लम्पट राम का गला दबाकर) तुम्हीं ने मेरी बेटी को मारा है, मैं तुम्हीं से अपनी बेटी लूँगा। लादे, मेरी बेटी को जिला दे, नहीं तो मैं महाराज के दरबार में तुझ पर दावा करूँगा और तुझे फाँसी दिलाऊँगा। उसे बगैर लिये कल नहीं पाऊँगा।

लम्पट-अरे, पर छोड़ तो, या यहीं मार डालेगा ?

लोभ-तेरा मरना ही ठीक है !

झक्की-(स्वगत) और आपका जीना ! क्यों ठीक है न ?

लम्प०-अब तो बुरे फँसे, कुछ दे दिला कर जान बचाना चाहिये नहीं तो फाँसी पर लटकना पड़ेगा।

लोभ-चल २ तुझसे दरबार में अपनी बेटी का बदला ले करके ही छोड़ूँगा, हाय! तूने ही मुझे बरबाद किया है।

लम्पट-(स्वत) और तूने मुझे लूट लिया है! (कमर से रुपये की थैली निकाल कर) ले, ले इसे और मुझे छोड़ दे!

झक्की-तब तो ले लपन्के! (उससे थैली लेकर लोभराम को छुड़ा देता है, वह छूटते ह भागता है)

लम्पट-जान बची! लाखों पाये !!! (भाग जाता है)

लोभ-हाय, मेरी बेटी!

झक्की-स्वर्ग गई! चलिये सेठजी अब] इसका दाह कर्म कराइए और इस थैली को देख २ कर सोच को भुलाइये!

लोभ-चलो, पर यह किस काम की है?

झक्की-ऐसा न कहिये, ये कन्या विक्रय की कमाई है। (जनता से) क्यों ठीक है न! (सेठ जी) आइये, अब इसे उठाइये और चलकर श्मशान जगाइये!

[दोनों इसे उठाते हैं और ले जाते हैं—झक्की जाते २ कहता है]

चेतो यारो देखो यह है कन्या विक्रय का परिणाम!
बूढ़े का है व्याह हो रहा, बोलो! यारो राम नाम!
क्यों ठीक है न?



अंक दूसरा—दृश्य छठवाँ ।



स्थान—महर्षि गौतम की तपोभूमि ।

[चारो ओर खेमा गड़ा हुआ है मण्डप के पास सत्यवान दूल्हा बना बैठा हुआ है सावित्री उसके वामभाग में बैठी हुई अश्वपति व महाराज द्युमत्सेन और महारानी विराजमान हैं राजपुरोहित और नेगीलोग खड़े हैं महर्षि गौतम अपने शिष्योंके साथ मंगल पाठकर रहे हैं]

गौतम—मंगलं भगवान् विष्णुर्मंगलं गरुड़ध्वजम् ॥
मंगलं पुण्डरीकाक्ष मंगलायऽतनोहरिः ॥

[सब लोग अच्छत छोड़ते हैं]

बस अब सब कार्य निर्विघ्न समाप्त हो गया। ईश्वर वर कन्या को चिरायु करे और इनकी कीर्ति अटल हो ।

[सत्यवान और सावित्री सबको प्रणाम करते हैं लोग आशीर्वाद देते हैं]

प्रेम—पास में बँध रहो, सदा हृदय हर्षाय ।
ध्रुव मंडल में दुहुन की, धवल ध्वजा फहराय ॥

[ऋषि कन्यायें पुष्प अच्छत को वर्षा करती हुई नाचती गाती हैं]

जियो जुग २ जुगल जोड़ि आनन्द मनाय ।
हम नाचें गावें गान मंगल हर्षाय ॥
नयो नेक नैनन निरखि नवल नेह के बीच ।
प्रणय पुष्प की बेलिको स्नेह सुधा सों सींच ॥
रहे जोड़ी अचल प्रेम होवे अटल ।
सुख पावें सखिहि गुण गाय गाय गाय ॥

अङ्क दूसरा—दृश्य सातवाँ।



स्थान—वनमार्ग।

(देवर्षि नारद का भगवत भजन करते हुए प्रवेश)

गाना—करु मन प्रभु चरणन सो प्रीती।
काम क्रोध मद लोभ में पडकर व्यर्थ उमिरिया बीती॥
जग की झूठी माया जोडी जो जगमें रह जाती।
पुण्य की पूंजी पास न रक्खी अन्त काम जो आती॥
झूठा ममता मोह जगत का झूठे संग संघाती।
ये काया भी साथ न जाती, नेकी बदी संग जाती॥
गुप्त स्वार्थ का प्रेम सृष्टि में सब देख जग जाती॥

नारायण, नारायण, नारायण, हा! काल चक्र! तू प्रधान है, भावी अटल और समय बलवान है। आज सावित्री और सत्यवान के विवाह हुए एक वर्ष पूरे होगये और इस वर्ष के साथ ही साथ सावित्री के सुहाग के दिन भी पूरे हो गये! अब कुछ ही समय के बाद यमराज की सेना आयेगी और संसार के सत्यवान रूपी सुन्दर और पवित्र पुष्प को अपनी पैशाचिक शक्ति से चूर्ण कर डालेगी, सावित्री के सुखों को दुखोंसे बदल देगी और उसके हृदय रत्न को लूट लेगी परन्तु इसमें बस ही किसका है? यह तो सत्य ही कहा है कि—

"निज इच्छा समोनास्ति, दैव इच्छा प्रवर्त्तने।"

फिर भी मुझे अपनी प्रतिज्ञानुसार उसकी सहायता तो करनी ही चाहिये, फिर हरि इच्छा, क्योंकि—

इस काल की चक्की के चक्करम पिसगये बडे २ बलवान।

बचा नहीं कोई इसके पंजे से ज्ञानी चतुर सुजान ॥
दीन दरिद्री दुःखी सुखी भोगी योगी मंगन धनवान ।
ओझा वैद्य वेदशास्त्री अरु जो थे सर्व गुणों की खान ॥
चले गये सब काल गाल में विश्व विजेता नृप सम्राट ।
काल प्राण पक्षी ले भागा पड़ा रह गया खाली ठाट ॥

नारायण, नारायण, नारायण ! अच्छा अब चलना चाहिये और जिसमें सती सावित्री का कुछ उपकार हो सके सो करना चाहिये !

गाना ।

भजु मन नारायण नारायण नारायण ।
करो गोविन्द गोविन्द का गायन ॥ भजु० ..

(गाते गाते जाना)

अंक दूसरा—दृश्य आठवाँ ।



स्थान—घोर वन ।

(सत्यवान का सावित्री के साथ प्रवेश)

सावित्री—नाथ ! मैं अब भी कह रही हूँ कि आश्रम को लौट चलिये, जिद्द न कीजिये ।

अपशकुन बहु हो रहे हैं भाग्य को पहिचान लें ।
प्रस्थान आश्रम को करें यह बात मेरी मान लें ॥

सत्य—प्राणेश्वरी ! ये कैसी बातें कह रही हो ? जब तुम मेरे साथ ही हो, तब क्यों डर रही हो ?

सावित्री—इस लिये, कि यदि मैं किसी विपत्ति में पड़

जाऊँगी, तब आप तो मेरी रक्षा कर लेंगे, लेकिन मैं अबला तो आपकी रक्षा में असमर्थ हूँ, चलिये प्राणनाथ! आश्रम को चलिये, अब यहाँ न ठहरिये, देखिये सन्ध्या हो चली है, अब यहाँ का ठहरना ठीक नहीं है!

सत्य०-पर काष्ठ तो ले लेने दो।

सावित्री-नहीं नाथ! आज आप कुछ मत कीजिये, बस अब लौट चलिये, देखिये! जब कुटिया से निकले थे, तभी बिल्ली ने मार्ग काटा, आगे बढ़े ही थे कि कुत्ता के रोने का स्वर सुनाई पड़ने लगा अब बार २ मेरे सरकी साड़ी सरकी जाती है, न जाने क्यों दाईं आँख फड़फड़ाती है। प्राणेश्वर! ये अपशकुन मुझे किसी घोर दु खों के आने की सूचना दे रहे हैं; और आज आप भी अनायास ही जिद्द कर रहे हैं।

सत्य-अच्छा तो ठहरो! लो, मैं। इसी पेड़ से थोडा सा काष्ठ लेकर चला चलता हूँ। जिसमें तुम प्रसन्न रहो वही करता हूँ। (सत्यवान लकड़ी काटने के लिये पेड़ पर चढ जाता है)

सावित्री-हैं! फिर मेरी दाहिनी आँख फडकी, दैव! दया करना। (आकाश की ओर देखकर) प्रभो! आज यह कैसा अपशकुन होरहा है? मेरे अङ्ग का दायाँ भाग क्यों फडक रहा है? रह रह कर मेरा हृदय क्यों काँप उठता है? प्रात कालही सूर्य की ओर मुंह करके सियार क्यों रो रहे थे? दिवसमें तारे भी टूटते हुए दिखाई क्यों पड़ रहे थे? हाँ! याद आया, आज ही वह कुदिन है, जिसके लिये देवर्षि भगवान नारद ने चेता-वनी दी थी। तब, तब, क्या करूँ? नाथ! नाथ! मेरी रक्षा करो अपने दीन-बन्धु नाम को चरितार्थ करो। गोपाल! मुझ निरीह गायको कसाई कालके हाथों बरबाद होने से बचाओ!

हे दुष्ट निकन्दन भव-भय भञ्जन जन मन रञ्जन दुःख हरो।
गोपाल हो तुम और गाय हूँ मैं मृगराज सो मम उद्धार करो॥
तुम नाथ हो और अनाथ हूँ मैं डूबत दुखिया की बाँह धरो।
मझधार में डूबत है नैया भवसिन्धु खेवैया पार करो॥

सत्य-आह! यह क्या? यह मेरे मस्तक में भयानक पीड़ा क्यों होने लगी? दौड़ो २ प्रिये! मुझे बचाओ! मेरी रक्षा करो! हाय! मरा! म...रा .

(सावित्री दौड़कर पेड के पास पहुँच जाती है पर सत्यवान उतरता उतरता गिर पड़ता है सावित्री उसके मस्तक को अपनी जाँघ पर उठाकर धर लेती है और आँचल से हवा करने लगती है)

सावित्री-हाय! जो सोचती थी, वही आगे आया! रक्षा करो भगवान! रक्षा करो' यदि संसार में धर्म का मान है, यदि सत्य की कोई शक्ति है, यदि पतिव्रता अबला नारी के पतिव्रत का कुछ प्रताप है, तो मेरे प्राणनाथ की रक्षा करो!
सति के सतका जो बचा नहिं मान,पतिव्रत का न प्रताप रहा।
तब धर्म अधर्म कहावैगा, सब ढोंग का पूजा जाप रहा॥
सत, धर्म की होगी हँसी जग में सावित्री ने जो दुःख सहा।
संसार कहेगा धर्म को धोखे और के सपने मात्र महा॥
सत-धर्म मिटेगा धरणी से सति जो विधवा के भेष रहैगी॥
मिट जायगा मान सुकर्मों का करतार की कीर्ति न शेष रहैगी॥

सत्य०-हाय! यह दुःख अब नहीं सहा जाता है, मेरे मस्तक को कोई कुचले डालता है। हाय यदि थोड़ी देर तक और यह वेदना रही, तो यह प्राण पखेरू निश्चय ही इस तन पिंजड़े की तिल्ली को तोड़कर उड़ जायगा।

सावित्री—नहीं, नाथ ! ऐसा नहीं हो सकता है ! संसार की कोई भी वड़ी से वडी शक्ति हम लोगो का विछोह नहीं करा सकती है। महाकाल की क्रूर सेना भी सावित्री के होते हुए आपको हाथ नहीं लगा सकती है ।

सत्य की शक्ति से यम-दूतों को मार भगायँगे।
आयेंगे जो दुष्ट याँ सत-अग्नि से जल जायँगे॥
वचाने आयेंगे दु ख से वसैया क्षीरसागर के।
छलक सकता नहीं जीवन का जल काया के गागर से॥

(अन्धकार बढ जाता है यमदूतों की भयानक मूर्तियाँ प्रकट होती हैं सत्यवान घबडाता जाता हैं।)

सत्य०—वचाव, वचाव ! वे देखो वे देखो ! यमदूतों की भयानक सेना आन पहुँची, आह ! आह !...प्रा...ए...श्व...री ...रा...म...राम (वेहोश हो जाता है)

सावित्री—(सावित्री देवी से)

सावित्री ! स्वर्ग से धाओ, मेरी लज्जा वचाने को।
प्रगट हो सत्य की ज्वाला यमालय के जलाने को॥
सुदर्शन चक्रधारी ! धाओ आओ दु ख भंजन को।
जो है कुछ सत्य में शक्ती न छूने पायें ये तनको॥

(आकाश फटता है श्रीजगत ।जननी गायत्री देवी दर्शन देकर सावित्री के सिर पर छाया करती है सावित्री के शरीर से सत्य की ज्वाला निकलती है यमदूत उसका ताप न सह सकने के कारण भागते है)

ड्राप

अङ्क तीसरा—दृश्य पहिला।

स्थान—वन मार्ग।

(यमका अपने यमदूतों के साथ सरोष प्रवेश)

यम क्या कहा? उस सतीके सामने तुम लोगों कोभागना पड़ा है? सत्यवान को लाने के विचारों को त्यागना पड़ा है!

सब दूत—हाँ श्रीमान्!

सरदार—हाँ श्रीमान्! उस सती शिरोमणि सावित्री के सामने ठहरना हम लोगों की शक्ति से वाहर है, उसके सत्य की ज्वाला हम सबों को जला देने के लिये तत्पर है। जब तक उसकी गोद में सत्यवान का सर है, तब तक वह वेडर है।

हम हुए प्रस्तुत जो उसको बाँध लाने के लिये।
जब हुए तैयार उसके पास जाने के लिये॥
मौत के फन्दे को जब फेंका फँसाने के लिये।
सत्य की ज्वाला उठी हमको जलाने के लिये॥
ला सके उसको न प्रभु के सामने जब मारकर।
तब शरण में आये हैं हम सब सती से हार कर॥

यम—बस, इतनी ही सी बात है? जिसके लिए इतना प्रलाप है! जाव,२,यदि तुम लोग उसे नहीं लासके हो,तो जाकर विश्राम करो, अब मैं खुद जाता हूँ और उसे अपने यम-पाश में बाँध लाता हूँ, उसको अपना पराक्रम दिखाता हूँ—

विश्व में विख्यात है शक्ति मेरी और मेरा बल।
वार के सम्मुख मेरे कोई नहीं सकता सँभल॥

नाम से मेरे जगत के सूरमा जाते दहल।
नाम से ही मेरे दम वीरों के जाते हैं निकल॥
है ठहर सकता न मुझ सम्मुख कोई संसार में।
फ़र्क पड़ सकता नहीं कुछ यमके कारोबार में॥

(यमराज का सरोष सत्यवान का प्राण लेनेके लिए बढ़ना-सामनेसे नारद जी का आकर रास्ता रोक लेना-दूतों का दूसरी तरफ से प्रस्थान)

नारद—नारायण, नारायण, नारायण !

यम-कौन ? भगवान् नारदजी ! प्रणाम करता हूँ !

नारद-प्रसन्न रहो, यमराज ! कहो इतने क्रोधसे किधर का प्रस्थान है आज ? नारायण नारायण नारायण !

यम०—न पूछिये, आज के प्रस्थान की कथा न पूछिये !

एक जरूरी कार्य वश करता हूँ प्रस्थान।
लेना है हमको स्वयं सत्यवान का प्रान॥

नारद—पर, यह कार्य तो आपके दूतों का है ?

यम-नहीं यह साधारण काम नहीं है, एक सती शिरोमणि के पतिका प्राण हर लाना, यह दूतों के सामर्थ्य से बाहर है।

नारद-पर, मेरी समझ से तो यह कार्य आपकी सामर्थ्य से भी बाहर है ! इसलिए यदि आप अपना मान नहीं गँवाना चाहते हैं, तो इस क्रूर विचार को छोड़ दीजिये और संसार में मान पाने के हेतु, दयालु कहलाने के हेतु, उसके टूटे हुए सुहाग सूत्र को जोड़ दीजिये !

जो भला चाहो तो अपना यह इरादा तोड दो।
उस सतीके सामने जाने की इच्छा छोड दो॥

यम-नारदजी ! ऐसी ऊटपटांग बातें न कहो, मेरे मान सम्मान पर इस तरह से हाथ साफ न करो !

मत कहो यह शब्द तुम मुझको भगाने के लिये।
तुम हो दुनियाँ में बस अग्नी लगाने के लिये॥

नारद—नारायण! नारायण! यमराज! ये कैसी बातें कह रहे हो? मुझे क्यों दोष दे रहे हो! मैं तो तुम्हारे भले के लिए कह रहा हूँ, कि संसार में निर्दयी न बनो! दया को न छोडो, किसी के हृदय को न तोड़ो—

है मजा कुछ भी नहीं इस व्यर्थ के उत्पात में।
मुझको बतला दो भला क्या सार है इस बात में॥
चैन तुम लेते नहीं हो एक क्षण दिन रात में।
इसको मारो उसको पकड़ो रहते हो इस घात में॥
इससे कहता हूँ तुम्हें यह निर्दयीपन छोड़ दो।
तोड दो जल्दी से अब यमपाश अपना तोड़ दो॥
वर्ना पछताना पड़ेगा तुमको अब इस कार में।
होते अपमानित सती से आज ही संसार में॥

यम—बस, बहुत हो चुका, अब आगे न बढ़िये, सीमा के अन्दर ही रहिये। जब देखो तभी आप सतियों की ही बड़ाई गाते हैं, और मुझे उन अबला नारियों के सत धर्म को धमकी से डराते हैं! उन्हें सर्व-शक्ति-शालिनी और मुझे निर्बल बताते हैं, अत मैं आज ही आपको दिखा दूँगा, कि—

विश्व विजयी भी मेरे सन्मुख ठहर सकता नहीं।
नारियों के डर से यह यमराज डर सकता नहीं॥
जा रहा हूँ सती को विधवा बनाने के लिए।
जाव तुम कोशिश करो उसको बचाने के लिए॥
परिक्षा आज हो जाये रहे झगड़ा नहीं कल का।
पता लग जायगा सति-शक्ति, या यमराज के बलका॥

नारद–इतना बडा अहंकार ! हा ! जब धर्मराज जैसे सर्वशक्ति सम्पन्न और महान् ज्ञानी लोग भी अहंकार से न बचे तो फिर साधारण लोगों का तो कहना ही क्या है ! दैव-इच्छा, नारायण, नारायण,नारायण ! यमराज तो चलेही गये, फिर अब क्या करूँ ? हाँ ! चलकर तमाशा देखूँ,यमराज किस तरह उस सती के सोते हुए सत्यवान को धर लेते हैं ? इसे देखूँ और यदि समय आये, तो उसकी कुछ रक्षा करूँ। परन्तु मैं उसकी क्या मदद करूँगा ? जब कि उसकी पति-भक्ति की पवित्र शक्तिही उसकी सहायता के लिये तैयार है ! नारायण, नारायण, नारायण ! तो यह मेरा व्यर्थ का विचार है।

तनिक अपकार उस नारी का यम से हो नहीं सकता।
है दुर्गा सी महामाया जो नारी है पती भक्ता॥
नारायण, नारायण, नारायण !

गाना।

रसना को राम कहने की बान पड़ गई।
हमको हमारे राम की पहचान पड गई॥
पोथी उलटने माला फेरते ही युग बिता।
मत धर्म से ये जान परेशान पड गई॥
वीणा के साथ बज उठी तंत्री हृदय की तर।
अनहद ध्वनी गुरु मंत्र की जब कान पड गई॥
परदा दुई का उठ गया खुद खो गई खुदी।
दिलही में रहा गुप्त मिला जान पड़ गई॥



अंक तीसरा-दृश्य दूसरा।

स्थान-घोर वन।

(सावित्री सत्यवान का मस्तक अपनी गोद में लिए हुए विलाप कर रही है)

गाना।

छाडि गये किन प्राण पियारे, बिलखत न जिमोही कहाँ सिधारे!
मणि विन फणि अरु मीन विना जल, जैसे न पावत है क्षणहूँ कल!
वैसे ही व्याकुल तुम विना प्यारे, करहु दया सुधि लेहु हमारे!
ध्यान हमारी दशा पर दीजै, नेक नजर दासी पर कीजै!
नारी-नाव पडी मझधारे, गुप्त प्रगट हो खेवन हारे!

नाथ नेह में नात तोड़ि के भागो न इकले नाथ।
विरह बहाव में बहत हूँ धरो आन कर हाथ॥

बोलो, बोलो, ऐ व्याकुल वनिता के हृदय देवता! एक बार तो मुख से बोलो! देखो जिसे प्रसन्न करने के लिए, तुम प्रति समय अपने प्रेम पियूष की वर्षा करते रहते थे, आज उसे नेत्रों की अश्रुबिन्दु वर्षाते देखकर भी चुप हो रहे हो? उठो २ नाथ! मेरी करुणानाद सुनकर नींद से जाग उठो और मेरे अशान्त हृदय को शान्त करने के लिए, कूलिनी के कल २ नाद, वीणाकी झनकार, वंशीकी विश्वमोहिनी ध्वनि और शुद्ध सुरस संगीतसे भी मनोहर स्वरोंमें मुझ दग्ध हृदया वियोगिनी के हृदय में दहकती हुई विरह—ज्वाला को बुझाकर उसे शान्त और शीतल कर दो, मुझे अंधेरे से उठाकर प्रकाश में धर दो।

(उसके शरीर पर हाथ फेरती है और घबरा जाती है)

हैं ! यह क्या, यह क्या ? मैं तुमसे अपने हृदय को शीतल करने के लिए कह रही थी, पर यहाँ तो आपके ही सारे अंग शीतल हो रहे हैं, तब, तब क्या आप मुझे संसार में अकेली ही छोड़ देना चाहते हैं ? नहीं नहीं बल्कि छोडकर चले गये। हाय ! अब मैं क्या करूँ ? यहाँ किसके सहारे रहूँ ?

(रोने लगती है और मूर्छित हो जाती है, यमराज आते हैं)

यम (स्वत) हैं ! यहाँ तो बड़ी ही कठिन समस्या है ? सावित्री सती है, धर्मोत्तमा है, आर्यसुमति है और सत्यवान का शीश उसकी जंघा पर है ! अत: मेरी बुद्धि तो कुछ काम ही नहीं करती है कि मैं क्या करूँ ?

मेरा इस जीव के लेने बिना निस्तार नहीं।
सती स्पर्श करने का मुझे अधिकार नहीं॥
क्या करूँ क्या न करूँ मन की मलिन्ता को।
दूर करदूँ किस तरह इस चितकि चिन्ताको ?

(यमराज चिन्ता में पड जाते हैं, सावित्री फिर होश में आती है)

सावित्री—है ! मेरी चिन्ता के लिए कौन चिन्तित हो रहा है ? बोलो २ ऐ मुझ दुखिया की चिन्ता करनेवाले। तुम कौन हो ? (ठहर कर) हैं ! कोई उत्तर नहीं, फिर वही निस्तब्धता फिर वही शून्य साँय साँय (उन्मादिनी होजाती है) बोलो २ नाथ ! तुम्हीं बोलो ! अब और अधिक मौन न रहो ! हा ! नहीं बोलते हो, न बोलोगे ? तब क्या मुझसे रूठ गये ? सचमुच ही रूठ गये ? हाँ ! समय रूठ गया है, परमात्मा रूठ गया है, विधाता रूठ गया है और इन्हीं कारणों से नाथ भी रूठ गये हैं ! तब क्या अब संसार में मेरा कोई नहीं है ? हाँ ! जब प्राणही नहीं है, तो फिर अब मेरे लिये है ही क्या ? हा ! अब मेरा कोई नहीं है ? अच्छा कोई नहीं तो न सही, मेरा धर्म और कर्तव्य

तो है ? सघन वन ! मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ, बहुत दिनों तक तुम्हारे हृदय में निवास किया है, अस्तु साक्षी रहो ! साक्षी रहो, ऐ आकाश के चाँद और तारो ! साक्षी रहो। हंस सेवित तटनी ताल और शून्य स्थान में विचरने वाले वायु ! तुम भी साक्षी रहो कि मैं अपना धर्म और कर्तव्य पूरा कर रही हूँ कहना २ ऐ शीतल समीर ! तुम मेरे माता पिता और सास श्वसुर से मेरा सन्देशा अवश्य ही जाकर के कह देना ! कि सावित्री अपने सुहाग के लिए, अपने स्वामी के साथ सती हो गई, नहीं ! यों नहीं, यों कहना, कि वह दोनों पति पत्नी नश्वर लोक को छोड़ कर अमरलोक को चले गये, जहाँ जीवन मरण, दु ख सन्ताप और वियोग का आभास भी नहीं होता है। टूट पड़ ऐ तारामण्डल ! टूट पड़ और मेरे हृदय की भाँति ही मुझे भी भस्म कर डाल। महाप्रलय ! तू अब भी क्या नहीं आता है ? पृथ्वी ? तू तो जगत जननी है, फिर तू अपने सन्तान की विकलता को कैसे देख रही है ? तेरा हृदय क्यों नहीं विदीर्ण होता है? कि जिसमें प्रवेश कर मैं इस वियोग अग्नि से बच जाऊँ, माता मुझे अपने अंक में ले ले और जननी के द्रवित और दयालु हृदय का परिचय दे दे। नहीं सुनती है ? तू भी नहीं सुनती है ? क्या तू भी रूठ गई है ? अच्छा २ तो फिर अब ? हाँ ? अब मैं अपने सत्य की ज्वाला प्रगट करूँगी और प्राणनाथ के साथ ही इस प्राण-शून्य शरीर को भी विसर्जन कर दूँगी।

यम—ठहरो, ठहरो ? ऐसा न करो ? ईश्वरी नियमों में बाधा न दो। बड़े ही शोक की बात है ? जो तुम इतनी बड़ी विद्यावती, सत्यवती और बुद्धिमती होकर भी इस तुच्छ शरीर के लिये रुदन कर रही हो। कहो २ क्या विद्या का यही फल है ? बुद्धिमत्ता इसी का नाम है ? देवी।

है धरणी सत्वर नहीं, लखो नश्वर जग की यह नश्वर लीला।
है प्रकृति प्राण का यहि नाता यह मौत का है केवल हीला॥
निस्तार जगत का सार यही है आया है सा जावेगा।
जिससे आकर आकार बना उस तत्व में तत्व समावेगा॥
दु ख सुख से है परे अमर आतमा माया में दु ख सहता है।
हाँ। कर्मों के कारण से उसका रूप बदलता रहता है॥

सावित्री—चुप रहो, २—ऐ ज्ञानगाथा के गाने वाले। कटेपर नमक लगाने वाले! चुप रहो! असमय की रागिनी न छेडो वियोगिनी को योग की शिक्षा न दो। हाँ! यदि मेरा उपकार करना चाहते हो, तो यह काष्ठ काटने को कुल्हाडी पडी हुई है उसे उठा लो, और इस संसार सागर के दुखद धार से उद्धार कर दो? इस अथाह यन्त्रणा-धार से पार कर दो?

मणि खोते ही फणि प्राण तजे यह उसके भाल कि रेखा है।
जल से हो विमुख मीन को जीने कहीं किसी ने देखा है॥
पावस के बीते बीर बहूटी जुगनू प्राण न रखते हैं।
फिर बिना पती के सती को जग में रोक किस तरह सकते हैं॥
वेदान्त विश्व त्यागी का है, अनुरागी का अनुराग है यह।
विरहाग्निको है अग्नि शिखा,सतिको सतिही सौभाग्य है यह॥

यम—तुमने जो कुछ भी कहा है, वह ठीक है, पर वह संसार के माया मिथित लोगों के लिये है, ज्ञानी विवेकी और बुद्धिमानों के लिये नहीं? विचारवानों के लिये नहीं।

सावित्री—हो सकता है। पर जब पर्वतों पर बिजली गिरती है,तब वह चाहे कितनाही कठोर क्यों न हो, फटही जाता है। जब वन में आग लगती है, तब चाहे चन्दन का वृक्षही क्यों न हो—उसे भी भस्म होना ही पडता है। अस्तु जो कुछ हो पर पहिले आप यह बताइये, आप हैं कौन? जो मुझ दु खियारी के दु ख में भाग ले रहे हैं? मुझ वियोगिनी को ज्ञान दे रहे हैं

यम—मैं कौन हूँ, सुनना चाहती हो? अच्छा तो सुनो, सूर्य भगवान का पुत्र यम हूँ और संसार के प्राणी मात्र का जीवन मेरे आधीन है। आज तुम्हारे स्वामी सत्यवान के जीवन का समय शेष हो चुका है, अत उसे लेने के लिए ही आया हूँ और इसी लिये कहरहा हूँ कि इस दुःख को छोड़ दो।

है जो होना होहिगा वह टल नहीं सकता।
किसीका जोर कुछ विधीकी गतीमें चल नहीं सकता॥
है प्रलय रचना यही निश्चित नियम ससार का।
ईश का विधि आपही है द्वार एक निस्तार का॥
क्रय वो विक्रय जिस तरह संसार का व्यापार है।
जीव के सम्बन्ध में वह यम का कारोवार है॥

सावित्री-(घबड़ाकर) हैं? यह क्या! यह क्या! क्या तुम यम हो? हाँ? यमही हो, तुम्हारी काली सूरत ही तुम्हारे काले काण्डों का सच्चा उदाहरण है। तुम्हारी वक्र दृष्टि ही तुम्हारी वक्रता का प्रमाण है। आह! आगया! आगया! आखिर यह आत्मघातक आही गया! रक्षा करो, रक्षा करो! हे निर्वलों के नाथ? अशरण के शरण? सृष्टि के कर्त्ता, और दुष्टों के हर्त्ता? मेरी रक्षा करो? दानवरूपी, दैत्याकार देवता से मेरे प्राणनाथ की रक्षा करो? नहीं तो आज संसार का नियम टूट जायगा, काल की मर्यादा मिट जायगी, और सदैव के लिये आपकी दीन दयालुता की पदवी छिन जायगी—

उठो निद्रा से जागो शेष शैया छोड़ कर आओ।
है यम मृगराज मैं हूँ गाय, तुम गोपाल हो आओ॥
हो अवलाके सहायक तुम न अपने प्रणको विसराओ।
चमत्कारिक पुरुष हो तुम! चमत्कार आन दिखलाओ॥
न तुम आओगे जो इस वार, अवला के वचाने को।

उठेगी सत्य की ज्वाला, यमालय के जलाने को ॥

यम—शान्त हो ! शान्त हो ? ओ अभिमानी स्त्री ! शांत हो प्रार्थना के बदले प्रलाप के प्रकोप से मेरे क्रोध की अग्नि को न भड़का, बस !

विधान मे ब्रह्मा के परिवर्तन की आशा छोड़ दे।
है भला इसमे कि माया जाल मिथ्या तोड दे ॥

सावित्री-हैं ! यह मैं उद्वेग मे क्या कह गई ? क्या यमराज को गालियाँ देने लगी थी ? हाँ तभी तो यह रुष्ट हो रहे हैं, फिर अब क्या करूँ ? हाँ ! क्षमा प्रभो ! मुझे क्षमा कर दो, मैं निर्दोष हूँ। विरह में बेहाल हो रही हूँ, आपको सामने देखकर पागल हो गई हूँ। भगवन् ! हाथ जोडती हूँ, आपकी शरण हूँ, मेरा मान न खोइये, स्वामी के बदले में मुझे मार डालिये परन्तु, उन्हे न छूइये, मेरा सुहाग न लूटिये ! मेरे जीवन धन को मुझ निरीह नारी से न छीनिये मेरे आँखों के आँसुओं पर हृदय के घाओं पर दया-दृष्टि डालिये, खुले हुये बालों पर और जुडे हुए हाथों पर तर्स खाइये !

थे सदा अपकार में अब तो लगें उपकार में।
दया करना सीख लें दानी बनें संसार में ॥

यम—(स्वत.) हैं ! आज यह क्या हो रहा है ? मेरा कठोर हृदय द्रवीभूत क्यों हो रहा है ? हा ! विधाता ! आज यह क्या होने वाला है ! इधर मेरा हृदय पिघला जाता है और उधर सावित्री का करुणा-स्रोत बहा आता है, तब क्या करूँ ? हाँ ! किसी युक्तिसे सावित्री को सत्यवानके शरीरसे अलग कर उसे डराऊँ अपना कार्य बनाऊँ ! (यमराज यमपाश निकालते हैं)

सावित्री-हैं ! आप चुप क्यों हैं ? बोलिये २, देव दया कर एक व बोल दीजिये, कि आपने मेरे पतिको छोड़ दियाहै

है ? (यमको हाथ से यम-पाश घुमाते हुए देखकर) हैं ! यह तो आप अपना पाश घुमा रहे हैं,दया !! क्या आप दया न करेंगे ? क्या सचमुच ही आप अपने कार्य से न हटेंगे ? नहीं, २ देव ! आज तो आपको हटना ही पड़ेगा,यदि एक अबला सती नारी में कुछ भी शक्ति है. तो आपको भी मेरी करुणा पर द्रवनाही पड़ेगा। और इस दुखिया के दु ख को हरना ही पड़ेगा।

सती हूँ सत्य हित सत्धर्म का पल्ला पकड़ती हूं।
बनाओ मत मुझे विधवा तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ॥

(सावित्री उठकर यमराज का पैर पकडना चाहती है, यमराज सत्यवा को पृथ्वी पर सावित्री से पृथक देखते ही उसके प्राण को यमपाश में बाँध लेते हैं और आकाश में उड़ जाते हैं)

यम-बस, अब यहीं पर रोया गाया कर, मैं अपना कार्य कर चुका, अब तू भी इस शरीर का अन्तिम संस्कार कर।

सावित्री-क्या कहा ? तुम अपना कार्य कर चुके ? अच्छा तो फिर मैं भी अपना कार्य करती हूं, यमराज ! ठहरो, मैं भी अपने स्वामी के साथ चलती हूँ !

मेरे रहते पास तुम स्वामी को धर सकते नहीं।
पृथक पत्नी को पती से तुम भी कर सकते नहीं॥
पड़े कितने ही सकट सब्र से सब कुछ सहूंगी मैं।
जहाँ रक्खोगे स्वामी को उसी जाँ पर रहूँगी मैं॥
यदी है सत्य में शक्ती यदी है पती में भक्ती।
तो मुझको रोक सक्ती है न कोइ संसार की शक्ती॥
सतीकी शक्ति सम्मुख आ, प्रगट हो सत्य का सतबल
जहाँ प्राणेश जाते हैं, वहीं पर मुझको भी ले चल॥

(आगे आगे यमराज आकाश मार्ग से जाते हैं, पीछे २ सावित्री भी सत्य बल के सहारे जाती है। सीन ट्रान्स्फर होता है)

अंक तीसरा—दृश्य पाँचवाँ।

स्थान—अनन्त आकाश।



(यम अपने पीछे सावित्री को आते हुए देखकर रुक जाते हैं)

यम—(स्वत) यह क्या! सावित्री मेरा पीछा कर रही है! मृत्युलोक की रहने वाली नारि, अमरलोक के यात्री के साथ भ्रमण कर रही है ? (प्रगट) जा जा सती नारि! जा बहुत हो चुका, अब लौट जा! तेरे धर्म की काफी परीक्षा हो चुकी अब चली जा व्यर्थ ही दुःख न उठा! जिसका जहाँ तक संस्कार रहता है वह वहीं तक उसके साथ रहता है।

न होगा लाभ कुछ भी तुझको मेरे साथ आने से!
मेरे बातों को ले अब मान, बच जा दुःख उठाने से!

(सत्यवान की रूह दिखा कर)

काल से तकरार मत कर, जाकर इसका कर्म कर।
लौट जा तू पाल जाकर जगमें अपने जगका धर्म॥

सावित्री—नहीं, प्रभो! ऐसा नहीं हो सकता है! लाठी मारने से पानी नहीं फट सकता है!—

चन्दन से कभी उसकी महक दूर न होगी।
फूलों से कभी उसकी गमक दूर न होगी॥
सूरज से कभी उसकी दमक दूर न होगी।
चन्दा के तारों से चमक दूर न होगी॥
कमला न दूर होगी त्रिभुवन के नाथ से।
होगी सती भी दूर न स्वामी के साथ से॥

यम—देवी! मैं तेरे पतिव्रत-धर्म और सतीत्व-शक्ति से अत्यन्तही प्रसन्न हूँ इस लिये पुनः कहता हूँ कि सत्यवान को छोड कर और जो कुछ भी वरदान चाहे माँगले और लौटजा।

सावित्री—देव! यदि ऐसीही इच्छा है, तो मेरे सास स्वसुर की ज्योति-हीन आँखों को ज्योतिर्मय बना दीजिये।

यम—तथास्तु! जा, अब लौटजा और अपने सास स्वसुर की सेवा में मन लगा। जब तेरे सास स्वसुर तेरे सम्मुख आवेंगे तो उसी समय उनके नेत्र ज्योतिर्मय हो जायेंगे।

(यमराज आगे बढते हैं, सावित्री भी पीछे २ बढ़ती हुई जाती है सीन ट्रान्सफर होता है)

अंक तीसरा—दृश्य चौथा।

स्थान-तारा मण्डल।

(आगे आगे यमराज और पीछे २ सावित्री का प्रवेश)

यम-(पीछे देखकर) हैं! तू लौटी नहीं, मेरे पीछेही आती है?
बड़ी शक्ति थी जो तू इस जगह तक साथ आई है।
तेरी इस पती भक्ती और सत्-बल की बड़ाई है॥
मगर तू और आगे साथ मेरे आ नही सक्ती।
तेरी शक्ती भी दुर्गम मार्ग में अब जा नही सक्ती॥
व्यर्थ मत कर चेष्टा स्वामी को लेने के लिये।
और जो मांगे तुझे प्रस्तुत हूँ देने के लिये॥

सावित्री-देव! यदि ऐसाहे तो दयाकर यह बरदान दें, जिससे मेरे सास स्वसुर को उनका गया हुआ राज्य उन्हें प्राप्त होजाय-

यम—तथास्तु, ऐसा ही होगा! —
बिन प्रयास ही मिल गया उनको सारा राज।
मंगल मोद महान हो सुखद सजेगा साज॥

(यम बढ़ने लगते हैं, सावित्री भी साथ करती है, सीन ट्रान्सफर होता है)

अंक तीसरा—दृश्य पाँचवाँ।

स्थान—चन्द्रमण्डल।

यम-(सावित्री को अपने पीछे देखकर) जा जा ओ हठीली नारि! लौटजा, मैं फिर कहता हूँ कि व्यर्थ का दुःख न उठा!

सावित्री—यह ठीक है, परन्तु जैसे फतिंगे जान बूझ कर ज्योति-सिखा में जल मरने ही को अपना सुख मानते हैं, वैसे ही सती नारि पतिव्रत-धर्म के पालनार्थ अपने प्राणों का वलिदान कर देने में ही प्रसन्न होती है!—

जल विहीन सरवर की शोभा विना धार तलवार।
विना आव मुक्ता फलकी सी विना पुरुष की नार॥

यम—सावित्री! इसमें सन्देह नहीं है, तेरी बातें अकाट्य हैं, पर विधि विधान में किसका वल चल सकता है?

सावित्री—धर्म का!

यम—किस तरह?

सावित्री-इस तरह, जब कि कर्म से ही कर्म की सृष्टि होती है, तो फिर अच्छे कर्मों द्वारा प्राणी अपने पाप पूरित कर्मों का परिवर्तन भी कर सकता है,अस्तुजो निस्वार्थ प्रेमी और सच्चा धर्मात्मा है-वह विधाता के विधान को भी वदल सकता है।

हवन से ही धूम्र उठा और धूम्र सेही वृष्टि हुई।
कर्म क्या है कर्म से ही कर्म की सृष्टी हुई॥
इसलिए यदि प्रेम सच्चा है हमारा नाथ में।
तो सदा मैं भी रहूँगी निज पती के साथ में॥

यम—(स्वत) अब क्या करूँ? अच्छा इसे और भी कोई वरदान देकर टालूँ (प्रकट) सावित्री मैं क्या करूँ मैं स्वत?

अपने कर्तव्य के पाशमें बँधा हुआ हूँ अत तेरी इच्छा को पूर्ण नहीं कर सकता हूँ; हाँ ! यदि तू और भी कोई वरदान चाहती है, तो माँग ले और मेरा पीछा छोड़ दे।

सावित्री-दीजिये,देव ! दीजिये ! यदि आप देनाही चाहते हैं, तो जिससे मेरे पिता की वंश-वृद्धि हो ऐसा उन्हें सौ पुत्र रत्नों के होने का वरदान दीजिये।

यम—तथास्तु, मैं तेरी इस इच्छा को भी पूर्ण कर रहा हूं?

[यमराज तेजीके साथ वढते हैं, सावित्री उनका पीछा करती है सीन बदलता हैं]



अंक तीसरा-दृश्य छठवाँ।



स्थान-शून्य वैतरणी का तट।

[आगे २ यमराज और पीछे २ सावित्रीका उनका पीछा करते हुए आगमन]

यम—चलो, इस झगड़े से पीछा तो छूटा, वस अव वैत-रणी को पार करना चाहिये और यमालय में चलना चाहिये।

सावित्री—परन्तु सती भी पती के साथ ही चलेगी -
मान सरोवर जहाँ रहेगा वहीं हंस का वास रहेगा !
तारे सदा वहीं चमकेंगे जहाँ स्वच्छ आकाश रहेगा॥
वहीं रहेगा दिवस सदा सूरज का जहाँ प्रकाश रहेगा।
उसी तरहसे हृदय सतीका स्वामी ही के पास रहेगा॥
पतीसे पत है यही कहा है,पती है सर्वस यही कहूँगी।
जहाँ रहे वह वहीं रही, अव जहाँ रहेंगे वहीं रहूँगी॥

यम—तो क्या तू विधवा के विधान का अपमान करना चाहती है ? क्या इस अमिट कार्य्य को मिटा देना चाहती है?

सावित्री-और क्या आप सत्यका अपमान करना चाहते हैं? एक सती को वैधव्य का दुःख देनाही अपना कर्तव्य मानते हैं?

यम—मैं तो क्या संसार की कोई भी शक्ति सत्य को नहीं जीत सकती है। साथही इस कार्य को भी नहीं रोक सकती है।

सावित्री—तो फिर सावित्री भी अपने सत्यव्रत से नहीं पलटती है। अपने नारि कर्तव्य से नहीं हटती है!

यम—तू क्या कह रही है, उसे मैं नहीं समझता हूँ?

सावित्री-तो समझने की चेष्टा कीजिये! सुनिये महाराज ध्यान लगा कर सुनिये! उत्तमों का एक वार का मिलाप भी निष्फल नहीं जाता है। उत्तम अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहते हैं। वह कभी भी व्यर्थ का क्रोध नहीं करते हैं, अहंकार में पड़ कर अन्याय नहीं करते हैं, वह ईश्वर के प्यारे, मोक्ष के अधिकारी देवताओं के प्रिय बन्धु और विद्वानों की प्रशंसाके पात्र होते हैं अस्तु आपसे मिल कर सावित्री भी निराश नहीं हो सकती है—

धुल नहीं सकता कभी, मैं हूँ रँगी उस रंग में।
हार ही सकती नहीं मैं प्रेम के इस जंग में॥
मुक्त हो जाता है प्राणी ज्यों नहाकर गंग में।
दुःख सह सकता नहीं त्यों उत्तमों के संग में॥

यम—सावित्री! मुझे पागल न बना, भूमिका बाँध कर मेरा समय न गंवा, तू क्या कहना चाहती है; वह साफस्वता

सावित्री-यही, कि जैसे "उत्तम" परिवार, नगर और देश की शोभा हैं। जैसे चकोर चन्द्र पर आकर्षित होता है, जैसे बीणाकी ध्वनि पर नागिन प्रेम के वशीभूत हो जाती है, वैसे ही उत्तमों की उत्तमता पर विमोहित हुआ प्राणी, उनकी शरणागत

हो जाता है और मैं भी जब ऐसे पुरुष की शरण में आगई हूं, तो फिर अब मुझे क्या चिन्ता है? अब मेरे सुख दुखकी चिन्ता तो आपको ही होनी चाहिये?

यम-सावित्री? क्या तू बातों में ही बाँध लेना चाहती है?

सावित्री—नहीं, भला मैं आपको बातों में बांध कर क्या करूंगी जब की आप स्वयं ही अपनी उत्तमता के जाल में बंधे हुए हैं। सुनिये, यदि धन है और उत्तमता नही, यदि स्वर्ण है, और उत्तमता नहीं, यदि राज्य है और उत्तमता नहीं, यदि भूमि है और उत्तमता नहीं, यदि बड़ा परिवार है और उत्तमता नहीं तो कदापि भी वह स्वर्ण वह राज्य, वह भूमि और वह परिवार सुखदाई नहीं बल्के महान दुखदाई है। अत यमराज! आप अपनी सूर्यवंश की उत्तमता पर दृष्टि रखते हुए, मेरे निर्दोष पति को मेरी पत रक्षा के लिये छोड़ दीजिये। बस! इस दुखिया पर महान उपकार कर संसार क्या समस्त ब्रह्माण्ड में यश लीजिये —

यों न करें निराश मेरी आश तोड़ कर।
रक्खें शरण की लाज, पती-प्राण छोड़ कर॥

यम—यह मेरी सामर्थ्य के बाहर है।

तू और जो कुछ माँगे प्रस्तुत हूं दूंगा दान वो।
बदला न मुझसे जायगा विधिके इस अमिट विधान को॥

सावित्री-यमराज! ऐसा न कहिये उत्तमों के मिलाप से भी कोई निराश जाता है? तब क्या आज यमराज सावित्री को अपने सामने से निराश लौटाया चाहते हैं?

यम—नहीं, मैं तुझसे अत्यन्त ही प्रसन्न हूं अत तुझे इतने नवरदान देने पर भी और जो तू वर चाहे, उसे देने को तैयार हूं, परन्तु तेरे पति को नहीं छोड़ सकता, इसीसे लाचार हूं।

नारद—(आकर) बस, यही! समय है (नेपथ्यमें छिप कर गाते हैं)

गाना।

छोह जिस पर करते भगवान, उसे देते सुन्दर सन्तान ॥
पुत्र रत्न बड़ भाग से मिलता, माँग यही वरदान ॥छोह॥

सावित्री - हैं! ये कैसी चेतावनी! ठीक है, यही ठीक है!

पकडूँगी यमराज को डाल युक्ति का पाश।
इसी युक्ति से होयगी अपनी पूरी आश ॥

यम—बोलो बोलो सावित्री! तुम चुप क्यों हो? क्या सोचती हो? सत्यवान के सिवाय तुम क्या चाहती हो?

सावित्री—तो फिर मैं जो भी माँगूँगी, उसे दीजियेगा?

यम-हाँ! तुम सत्यवान के प्राण को छोड़ कर और जो कुछ भी माँगोगी उसे दूँगा; और अवश्य दूँगा।

सावित्री-प्रतिज्ञा कीजिये?

यम-हाँ, हाँ! परमात्मा साक्षी है, कि सत्यवान के प्राण दान और तुझे उसके साथ ले चलने के अतिरिक्त और तू जो भी वरदान माँगगी, तुझे खुशी से दूँगा?

टले पृथ्वी भले ही औ चहे आकाश टल जाये
नहीं यह वाक्य टल सकता कि जो मुँहसे निकल जाये ॥

सावित्री-ठीक है! यदि तुम्हारा यही संकल्प है, तो ईश्वर को साक्षी जान कर, अपनी धर्म-निष्टा पर दृष्टि देते हुए मुझे यह आशीर्वाद दो, कि मेरे गर्भसे मेरे पिता और श्वसुर दोनों कुलों के उदय करने और यश बढ़ाने वाला बल शाली धर्मात्मा और निष्कलंक पुत्र रत्न उत्पन्न हो—

जो हैं प्रसन्न मन वच कर्म, यहि वरदान दे दीजे।
कि होवे आश पूर्ण नैराश की कल्याण प्रद कीजे ॥

जो तत्पर हैं स्वयं वाक्यों के यह वरदान दे दीजे।
कि तर्पण पिण्ड का अधिकारि एक संतान दे दीजे॥
यम-बस, यह कौनसी बड़ी बात है? जा यह भी दिया।
पूर्ण हो मन्शा तेरी यह भी मेरे वरदान से।
पूर्ण हो गोदी तेरी अब शीघ्र ही सन्तान से॥
दे दिया यह भी तुझे माँगा जो तूने चाह से।
लौट जा अब तू यहाँ से हटजा मेरे राह से।
जा अब अपने रास्ते माया का बन्धन तोड़ दे।
पूर्ण हो इच्छा तेरी अब मार्ग मेरा छोड़ दे॥

(यमराज अपने वाहन को कुदाकर वैतरणी नदी से पार जाना चाहते हैं; सावित्री यमराज को पकड़ कर खैंच लेती है)

सावित्री-ठहरो! अब मेरे पतिको लियेहुए कहाँ जारहे हो?
ध्यान रक्खो मान रक्खो धर्म, वचन, विधान का।
खो न दो यों कह वचन निज धर्म धर पद्मान का॥
जो बढ़े आगे तो समझो पाप में बँध जायंगे।
साथ स्वामी को मेरे लेकर न जाने पायँगे॥
यम-(क्रोध से) हैं, यह क्या? छोड़दे, छोड़ दे, ओ मूर्खा स्त्री! यदि अपना भला चाहती है,तो मेरा दामन छोड़ दे!
बहुत तुझपर दया आई जो कुछ माँगा दिया मैंने!
न आई बाज तू आखिर ढिठाई यह किया तैने!
न अब यमराज का दिल आँसुओं पर तेरे पिघलेगा।
समझ वरदान के अस्थान से अब शाप निकलेगा॥
सावित्री-न तब अन्याय करती थी न अब अन्याय करती हूँ?
न डरती थी तभी तुमसे न अब भी तुमसे डरती हूँ!
तुम अपना काम करते हो, मैं अपना काम करती हूँ।
ऋणी हो अब हमारे तुम इसी से तुमको धरती हूँ॥

प्रतिज्ञा पूर्ण से पुन है, फिरे तो पाप ही होगा।
हुआ वरदान जो झूठा तो झूठा शाप भी होगा।

यम०—सावित्री! जबान सँभालकर बोल, झूठे दोषारोपण के लिये मुँह न खोल।

सावित्री—आप भी अपने दिए हुए वरदान का ध्यान कर लीजिये, तब मेरे पति को साथ ले जाइये!

यम०-ध्यानकर लिया है अच्छी तरहसे ध्यानकर लिया है।

सावित्री—तो क्या आपने मुझे निष्कलंक, धर्मात्मा पुत्र रत्न का वरदान नहीं दिया है?

यम०—दिया है, दिया है, तुझे निष्कलंक पुत्र का वरदान दिया है, परन्तु तेरे पतिको मुक्तकर देनेका प्रण नहीं किया है।

प्रतिज्ञा कर चुका हूँ जो उसे हरगिज न तोडूँगा।
न छोडूँगा कहा है इससे इसको भी न छोडूँगा॥

सावित्री-तो धिक्कार है! आपकी झूठी प्रतिज्ञा पर धिक्कार है! शोक है, आपकी बुद्धि पर शोक है! तुमसे प्रतिज्ञा के तोड़ने वालों पर शोक है! यमराज! क्या तुम अपने मिथ्या-वचनों से कम्पायमान नहीं होते हो? क्या तुम्हारा हृदय तुम्हारी प्रतिज्ञा के नष्ट होनेसे विदीर्ण नहीं हो रहा है क्या तुम पाप के परिणामों से भी नहीं काँपते हो? आश्चर्य है! कि तुम मेरे जिस पति को ईश्वर और देवताओं की साक्षी देकर छोड़ चुके हो, उसी को अब फिर ले जाना चाहते हो—

स्वयम् ही पाप करना और फिर दूजे को धमकाना।
कहाँ सीखा है यह तुमने वचन देकर बदल जाना॥

यम०—बस, मौन होजा, ओ धर्मराज के न्याय धर्म की निंदा करने वाली नारि! मौन हो जा! बता २ तेरे स्वामी को छोड़ देने के लिये मैंने कब कहा है?

सावित्री—सुनिये, सुनिये, यमराज! अपने प्रश्नों का उत्तर सुनिये, क्या अभी ही आपने मुझे मेरे गर्भ से दोनों कुलों की कीर्ति को उज्ज्वल करने वाला, निर्दोष पुत्र रत्न के उत्पन्न होने का वरदान नहीं दिया है—

दिया नही है क्या हमें, यह पवित्र वरदान।
फिर निज मुखसे क्यों करो निज प्रणका अभिमान॥

यम०-निज वच का मैंने कभी किया नहीं अपमान।
पती नहीं केवल दिया, है तुझको सन्तान॥

सावित्री-भूलते हो २ यमराज! अब भी भूलते हो! हा! शोक है! कि जड़ को काट रहे हो और डाल को सींचते हो! धर्मपाल, कहलाते हो और स्वयं ही धर्म को मींचते हो।

यम०—वो कैसे?

सावित्री-ऐसे, कि जब पति ही न रहे तो फिर मेरे गर्भसे निष्कलंक और कुल की मर्यादा को मण्डन करने वाला धर्मात्मा पुत्र कैसे प्रकट होगा? बोलो २ यमराज! बोलो, मुझे जवाब दो? कि बिना मेरे पतिदेव के आपके वरदान की लाज कैसे रहेगी? कहो, कहो क्या मुझे कलंकित करना चाहते हो? क्या मेरे पतिव्रत धर्म को तोड़ा चाहते हो, या मेरे सुहाग के लिये अपने वरदान की मान रक्षा के लिये, धर्म के उत्थान के लिये, और अपनी ज़बान के लिए, मेरे पति को छोड़ देना चाहते हो?-

समझ लो धर्म एक तरफ है, पाप धारा एक तरफ।
जगकी निन्दा एक तरफ है यश का तारा एक तरफ॥
पूर्ण प्रण है एक तरफ एक ओर अस्वीकार।
एक तरफ धिक्कार है एक ओर जय जय कार॥

बिक रहे हैं दोनों सौदे बोलिये क्या लेंगे आप।
बीच में हो तुम खड़े एक ओर धर्म एक ओर पाप॥

यम०-हार गया, हार गया सावित्री! मैं तेरे शक्ति साहस पतिव्रत-धर्म और चातुर्यता से हार गया प्रतिज्ञा के पुण्य पाश में बँधा हुआ यमराज अब तेरे पति को यम-पाश से मुक्त कर रहा है! ले अपने पति का प्राण ले और इसे इसके शरीर से स्पर्श करा कर अपने सुहाग को अचल कर।—

दी बदल तूने व्यवस्था सत्य बल से कर्म की।
विजय है यमराज के बल पर पतिव्रत-धर्म की॥

(यमराज सावित्री को सत्यवान का प्राण देते हैं, सावित्री इसे लेकर हृदय से लगाती है नारद प्रकट होते हैं)

नारद—नारायण, नारायण, नारायण!

यम—कौन, देवर्षि भगवान् नारद! प्रणाम करता हूँ।

नारद—प्रसन्न रहो।

सावित्री—भगवन्! दासी का भी प्रणाम स्वीकार हो।

नारद-जय जय कार हो, तेरा सुहाग अचल रहे और तेरे यश—प्रकाश का प्रसार हो।—

हो प्रसन्न प्रमुदित सदा पति पत्नी परिवार।
पथिक पुण्य पथ के रहो दया करें करतार॥

नारायण, नारायण, नारायण!

यम-कहिये महाराज! आज आप यहाँ पर कैसे पधारे?

नारद-आपका नाटक देखने अहा! कैसा उत्तम अभिनय था?

एक ओर यमराज अड़े, एक ओर अबला नार।
विजय सत्यबल की हुई, औ यम बल की हार॥

नारायण, नारायण, नारायण!

यम—सत्य है, भगवन् ! सत्य का बल ऐसा ही अपूर्व है, मैंने आपके वचनों का उपहास किया था, पर आज विश्वास हो गया कि जो स्त्री सच्ची सती और पति-भक्ता है वह यमराज को भी जीत लेने में सहज ही समर्थ्य हैं !

नारद—नारायण, नारायण, नारायण ! अच्छा तो फिर अब कभी भी सती से न उलझना !

अहंकार के शत्रु हैं जगतपती करतार।
सदा जगत में होत है अहंकार की हार॥

यम-आपकी बातों को मान लेता हूँ और मैं सावित्री की पतिभक्ति से अत्यन्त हो प्रसन्न हूँ अत उसे एक वरदान और भी देता हूँ ! कि आज से जा कोई रमणी ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी के दिन सत्यव्रत से सावित्री का व्रत करेगी वह जन्म जन्मान्तर के वैधव्य यन्त्रणासे मुक्त हो जायगी सावित्री की कीर्ति अचल रहेगी और उस तिथि का नाम सावित्री चतुर्दशी होगा।

मिथ्या हो सकता नहीं कभी मेरा वरदान।
सदा सोहाग अचल रहे साक्षी हैं भगवान॥

यम ताली बजाते हैं,सीन बदलता है,सब लोग गुप्त हो जाते हैं, केवल सत्यवान मरा हुआ दिखाई देता है)



अङ्क तीसरा—दृश्य आठवाँ।

—※—※—

स्थान-घोरवन।

(सत्यवान मरा हुआ पड़ा है उसके माता पिता उसे ढूँढते हुए आते हैं)

द्युम—हाय ! अब क्या करूँ, कहाँ ढूँढूँ कैसे ढूँढूँ ? हाय ! परमात्मा ! क्या तुझे मेरा इतना सुख भी नहीं भाता था ? जो तू ने हम अन्धे के सहारा देने वाले पुत्र-वधु को भी मुझसे छीन लिया और यह असह्य दुख दिया ?

रानी—हाय मैं सत्यवान के बिना कैसे जीऊँगी ? मेरा बेटा मेरी बुढौती का सहारा, मेरा प्राण प्यारा कहाँ है ? सत्यवान सत्यवान ! तू कहाँ है ? (सावित्री आकाश से उतरती है)

सावित्री—आई माताजी आई, घबड़ाइये नहीं हमलोग प्रसन्न हैं——

दुर्दिन घड़ी दुष्काल की आई थी कट गई।
आनन्द मनाइये कि अब किस्मत पलट गई॥

[सावित्री उतरते ही सत्यवान के शरीर से उसके प्राणों को स्पर्श करा देती है, सत्यवान उठ बैठता है]

द्युम—है है, उसकी आवाज है !

रानी—आव आव, बेटा आव, मेरे पास आव !

सावित्री-आती हूँ माता जी ! (सत्यवान से) उठिये २ प्राणनाथ उठिये एक बेर फिरसे संसारका अवलोकन करिये।

सत्य-आह ! आज निद्रा में मैंने बड़े ही भयानक भयानक स्वप्न देखे हैं, क्या कहूँ ! याद आने से हृदय काँप जाता है।

सावित्री—नाथ ! वह सत्य थे स्वप्न नहीं।

सत्य—तब क्या तू ने ही मुझे बचाया था ?

सावित्री-मैंने नहीं वल्कि आपकी सेवा की शक्ती ने आपकी पितृभक्ति से मैं यमराज को परास्त कर सकी। अब चलिये माता पिता का दर्शन करिये देखिये वे ढूँढ़ते हुए इधर ही आ रहे हैं!

सत्य-हा पितृ-स्नेह! तुम्हें धन्य है! (दौड़कर द्युमतसेन के चरणा पर गिर कर) पिता जी प्रणाम करता हूं! (द्युमतसेन उसे हृदयसे लगाते हैं, उनकी आँखें खुल जाती हैं)अहा! यह आंखों में दिव्य तेज कहाँ से आ गया? (सत्यवान को फिर हृदय से लगाकर) वेटा वेटा!

सावित्री-(सासके चरणों पर गिरकर) माताजी! प्रणाम!

रानी-(सावित्री को हृदय से लगाकर) सौभाग्यवती हो, सुहाग अचल रहे! (रानी की आँखे खुल जाती हैं) हैं! यह क्या यह क्या? क्या मैं स्वप्न देख रही हूं या वस्तुत मेरी आँखें खुल गई हैं!

नारद-नारायण, नारायण, नारायण?

स्वप्न नहीं सब सत्य है शंका करें न आप।
संतति सुख तुमको मिला,है सतिका ये प्रताप॥
सावित्री के सामने हार गये यमराज।
होगा अब पूरण सभी, राज ताज सुत साज॥
सुखी रहे जग में सदा, यह पवित्र दोउ मूर्ति।
अचल रहेगी जगत में, सावित्री को मूर्ति॥

(नारद आशीर्वाद देते हैं, सत्यवान सावित्री शीश झुकाते है, द्युमतसेन और रानी प्रसन्न होती हैं)

ड्राप

पं०श्रीलाल उपाध्यायके प्रबन्धसे-श्री विश्वेश्वर प्रेस,काशीमें मुद्रित